पायनियर
नई दिल्ली, मंगलवार, 15 जुलाई 2025

विमान हादसा

प्रणालीगत विफलता

हवाई यात्रा को परिवहन का एक सुरक्षित साधन माना जाता है। हवाई दुर्घटना की संभावना अपेक्षाकृत कम होती है जो इसे एक भरोसेमंद विकल्प बनाती है। एक वाणिज्यिक हवाई जहाज के दुर्घटनाग्रस्त होने की संभावना लगभग 0.000001 प्रतिशत होती है। विमान दुर्घटना में मारे जाने की संभावना 816,545,929 में से 1 होती है। हालाँकि, जब कोई हवाई दुर्घटना होती है, तो यह इस विश्वास को हिला देती है। आमतौर पर, या तो मानवीय भूल या तकनीकी खामी को इसके लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। अन्य कारण, निश्चित रूप से, खराब मौसम, अप्रत्याशित लैंडिंग या टेक-ऑफ की स्थितियाँ और यहाँ तक कि पक्षी का टकराना भी हो सकते हैं। हाल ही में उड़ान संख्या अक171 की हवाई दुर्घटना ने एक बार फिर सभी को चौंका दिया है, और अब कुछ रिपोर्टें सामने आने के साथ, यह दुर्घटना के संभावित कारण की कुछ जानकारी देती है, हालाँकि किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचना जल्दबाजी होगी। एयर इंडिया की उड़ान संख्या एआई171 की दुर्घटना के प्रारंभिक निष्कर्षों ने एक भयावह संभावना का खुलासा किया है—ड्रीमलाइनर के दोनों इंजन ईंधन कट-ऑफ स्विच के कारण हवा में ही बंद हो गए थे, जो कुछ ही सेकंड के अंतराल पर 'रन' से 'कट-ऑफ' स्थिति में चले गए, और इसमें कोई प्रत्यक्ष मानवीय हस्तक्षेप नहीं था। विमान ने लगभग तुरंत ही अपनी गति खो दी, जिसके परिणामस्वरूप उड़ान भरने के मात्र 32 सेकंड बाद अहमदाबाद में एक घातक दुर्घटना हुई। इस दुर्घटना में विमान में सवार 241 लोगों में से एक को छोड़कर सभी की और जमीन पर कम से कम 20 मेडिकल छात्रों की जान चली गई।

पायलटों के बीच हुई इस बातचीत से यह स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि स्विच बिना चालक दल के हस्तक्षेप के यांत्रिक रूप से विफल हो गए होंगे। दोनों ईंधन कट-ऑफ स्विचों का एक साथ चलना बेहद दुर्लभ है। वास्तव में, 2018 में अमेरिकी संघीय उड्डयन प्राधिकरण के माध्यम से जारी बोइंग की एक सलाह में चेतावनी दी गई थी कि ये गेटेड स्विच समय के साथ खराब हो सकते हैं और बिना बल के हिल सकते हैं। हालाँकि, सलाह में केवल 'शर्तों के अनुसार' प्रतिस्थापन की सिफारिश की गई थी—अर्थात स्विच केवल तभी बदले जाएँगे जब वे स्पष्ट रूप से खराब हो जाएँ—अनिवार्य ओवरहाल की नहीं। इस सलाह पर कार्रवाई होनी चाहिए थी। नागरिक उड्डयन को अब इसे व्यवहार में लाया जाना चाहिए।

यह त्रासदी यांत्रिक विश्वसनीयता, नियामक निगरानी और मानवीय निर्णय की भूमिका पर कठिन प्रश्न उठाती है। क्या यह यांत्रिक विफलता अनदेखी की गई टूट-फूट से उत्पन्न हुई थी, या ज्ञात कमजोरियों के प्रति संस्थागत प्रतिक्रिया में चूक थी? हालांकि अभी दोष देना जल्दबाजी होगी, लेकिन शुरुआती सबूत एक रोके जा सकने वाली प्रणालीगत विफलता की ओर इशारा करते हैं। यह सच है कि हवाई दुर्घटनाएँ दुर्लभ हैं, लेकिन जब वे होती हैं, तो बचने की संभावना लगभग शून्य होती है। इसका मतलब है कि विमान का रखरखाव और रखरखाव त्रुटिहीन होना चाहिए। इसके अलावा, पायलटों को अपनी सर्वोत्तम मानसिक स्थिति में रहने के लिए उचित 'आराम का समय' दिया जाना चाहिए। हवाई सुरक्षा के लिए उनका ध्यान और तत्परता अत्यंत महत्वपूर्ण है।

यह दुर्घटना एक गंभीर चेतावनी है कि विमानन में, एक भी अनदेखी की गई सलाह कितनी घातक हो सकती है। खराब हो चुके पुर्जों पर अनिवार्य कार्रवाई, नियामकों और ऑपरेटरों के बीच बेहतर सहयोग, और सुरक्षा पर शून्य समझौता की संस्कृति अब वैकल्पिक नहीं हैं। ये आवश्यक हैं।

जैसे-जैसे जाँच आगे बढ़ेगी, कई सवालों के जवाब तलाशने होंगे। क्या पायलटों ने स्थिति को संभाला होता, या बोइंग अपनी सलाह में ज्यादा स्पष्ट और स्पष्ट हो सकता था, या क्या उसने एक निश्चित समय अंतराल के बाद स्विच बदलना अनिवार्य कर दिया होता? दुर्घटना के कारणों का पता लगाने के लिए विमान का संचालन करने वाली एयरलाइनों और विमान निर्माता को कई सवालों के जवाब देने होंगे, लेकिन उससे पहले किसी निष्कर्ष पर पहुँचना और किसी एक पर दोष मढ़ना उचित नहीं होगा।

भारत के मिसाइल हमले से आहत पाक

भारत के शस्त्रागार के पैमाने, सटीकता और स्वदेशी शक्ति ने इस्लामाबाद को स्तब्ध कर दिया, जिससे चीनी हथियारों पर उसकी बढ़ती निर्भरता और आंतरिक राजनीतिक कलह व सैन्य शिथिलता से जूझना उजागर हो गया।

जी पार्थसारथी
लेखक, पाक में उच्चायुक्त रहे हैं।

भारत द्वारा पाकिस्तान पर की 8 मई को गई मिसाइलों की बौछार अभूतपूर्व थी। जहां नागरिक ठिकानों को सावधानीपूर्वक निशाना बनाया गया, वहीं हवाई अड्डों से लेकर आतंकवादियों के ठिकानों तक, दर्जनों सैन्य प्रतिष्ठानों को तबाह कर दिया गया। हालाँकि, मुख्यतः मिसाइलों और ड्रोनों द्वारा की गई हवाई बमबारी ने पूरे पाकिस्तान में आतंकवादी नेताओं के आवासों के अलावा, सैन्य हवाई अड्डों और अन्य सैन्य प्रतिष्ठानों को क्षतिग्रस्त या नष्ट कर दिया।

यह एक ऐसा हवाई हमला था, जैसा भारतीय उपमहाद्वीप में पहले के वर्षों में नहीं किया गया था। इसके बाद, 10 मई को पाकिस्तान के सैन्य संचालन महानिदेशक द्वारा अपने भारतीय समकक्ष को युद्धविराम का अनुरोध करने वाले एक टेलीफोन कॉल के बाद, युद्धविराम की घोषणा की गई। पाकिस्तान को दीवार पर लिखी इबारत समझ आ गई थी।

भारतीय गोलाबारी विनाशकारी और कभी-कभी असहनीय होती जा रही थी, जिससे पाकिस्तान द्वारा आतंकवाद को प्रायोजित करने से उत्पन्न लड़ाई को समाप्त करना आवश्यक हो गया। भारत की प्रतिक्रिया में भारत द्वारा निर्मित स्वदेश निर्मित मिसाइलें शामिल थीं, जो अपनी सीमाओं से परे भी सटीक निशाना साध सकती हैं। यही पाकिस्तान को झकझोरने का प्रमुख कारण रहा है, जो हाल के वर्षों में अपने पुराने अमेरिकी एफ-16 लड़ाकू विमानों के अलावा, चीनी हथियारों से भी लैस होता जा रहा है। महत्वपूर्ण बात यह है कि आर्थिक रूप से दिवालिया पाकिस्तान ने इस स्थिति में पड़ने का फैसला किया। इसने भारत को उकसाया और मजबूर किया कि वह कश्मीर घाटी के मध्य में स्थित पहलगाम में छुट्टियां मना रहे भारतीय नागरिकों की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निंदनीय, क्रूर हत्या का बदला लेकर कड़ी प्रतिक्रिया दे।

और भी आश्चर्यजनक बात यह है कि यह हमला ऐसे समय में हुआ जब आर्थिक रूप से दिवालिया पाकिस्तान, जिसकी आर्थिक विकास दर लगभग 2.6 प्रतिशत है, देश के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए लगातार विदेशी ताकतों और अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों से रियायती वित्तीय सहायता की भीख मांग रहा था। इस्लामी दुनिया में उसके सहयोगी भी आर्थिक सहायता के लिए लगातार संपर्क किए जाने से थक चुके हैं, जबकि पाकिस्तान गर्व से दावा करता है कि इस्लामी दुनिया में उसके पास परमाणु हथियार हैं। वह यह बताना भूल जाता है कि उसके परमाणु हथियारों और मिसाइलों के डिजाइन चीन द्वारा उदारतापूर्वक प्रदान किए गए हैं।

भारत की समस्याओं को और बढ़ाने वाली बात यह है कि पाकिस्तान में शाहबाज शरीफ के रूप में एक समझदार और संयमित प्रधानमंत्री तो हैं, लेकिन स्वतंत्र भूमिका निभाने की उनकी क्षमता उनके बड़े भाई और पूर्व प्रधानमंत्री नवाज शरीफ द्वारा सीमित है, जो सत्तारूढ़ पार्टी पर नियंत्रण रखते हैं। नवाज शरीफ अपनी बेटी शहनाज शरीफ, जो अब घनी आबादी वाले पंजाब प्रांत की मुख्यमंत्री हैं, को प्रधानमंत्री के उच्च पद का शीघ्र उत्तराधिकारी बनाने के लिए उत्सुक हैं। इस बीच, नवाज शरीफ को सेना का विश्वास प्राप्त नहीं है कि वे फिर से उच्च पद ग्रहण कर सकें। अतीत में सेना ने ही उन्हें पद से हटाया था। और इस समय, सेना पाकिस्तान के राष्ट्रीय जीवन में एक प्रमुख भूमिका निभा रही है। जहां तक भारत का सवाल है, नवाज शरीफ, जिन्होंने कारगिल संघर्ष में साथ दिया था, के साथ बहुत सावधानी से पेश आना होगा, हालांकि उनके द्वारा कारगिल जैसा दुस्साहस दोहराने की संभावना नहीं है। यह स्पष्ट है कि पाकिस्तान में नागरिक शासकों की शक्तियों की सीमाओं के अलावा, देश में अब जनरल सैयद असीम मुनीर शाह (जिन्हें असीम मुनीर के नाम से जाना जाता है) के रूप में एक भारत-विरोधी सेना प्रमुख है, जो भारत और सभी भारतीय चीजों के प्रति घृणा से ग्रस्त है।

यह विशेष रूप से आश्चर्यजनक है क्योंकि उनके गुरु और पूर्ववर्ती जनरल बाजवा, भारत के साथ पाकिस्तान के संबंधों में अपनी यथार्थवादिता और संयम के लिए जाने जाते हैं। पाकिस्तान के सेना प्रमुख के रूप में जनरल मुनीर के कार्यकाल का एक पहलू यह है कि अब उन्हें कमजोर शाहबाज शरीफ सरकार द्वारा फील्ड मार्शल के पद पर पदोन्नत कर दिया गया है, जिससे उनका कार्यकाल बढ़ गया है। राजनीतिक रूप से कमजोर और आर्थिक रूप से दिवालिया शाहबाज शरीफ की भारत के साथ होने वाले मौजूदा संघर्ष में उनकी अनुकरणीय भूमिका के लिए प्रशंसा की गई है। अजीब बात है कि जहाँ पाकिस्तानी वायु सेना भारत के साथ हालिया घटनाक्रमों और गोलीबारी में कुछ योगदान का दावा कर सकती है, वहीं पाकिस्तानी सेना का योगदान लगभग शून्य रहा है।

पहलगाम में भारतीय पर्यटकों पर हमलों के जवाब में भारतीय मिसाइल हमलों से हुई तबाही ने उसे स्तब्ध कर दिया था, इससे पहले कि उसके सेना प्रमुख ने अपने भारतीय समकक्ष को फोन करके युद्धविराम का अनुरोध किया। फील्ड मार्शल मुनीर भारत के लिए एक बड़ी धरोहर बने रहेंगे। उनका क्रूर और अशिष्ट भारत-विरोध न तो अमेरिका और न ही अन्य ज़िम्मेदार शक्तियों को प्रभावित करेगा।

इसके अलावा, उनकी कमान में पाकिस्तानी सेना ने हाल के वर्षों में, पहलगाम में भारतीय नागरिकों की हत्याओं के प्रतिशोध में पाकिस्तान पर हुए हालिया भारतीय हमलों के दौरान भी, कोई खास प्रदर्शन नहीं किया है। यह देखना बाकी है कि क्या पाकिस्तानी वायु सेना, जो सेना से कहीं ज्यादा पेशेवर संगठन है और जिसने पेशेवर तरीके से काम किया है, एक अपरिपक्व और कुछ हद तक दुस्साहसी ‘फील्ड मार्शल’ के पेशेवर रूप से कच्चे प्रदर्शन का आनंद लेगी, जो उसे सीधे और पूरी तरह से नियंत्रित करने की कोशिश करेगा। यह भी देखना बाकी है कि ‘फील्ड मार्शल’ पाकिस्तान और पड़ोसी अफगानिस्तान, दोनों जगह अशांत पश्तूनों और बलूचियों की भावनाओं पर कैसी प्रतिक्रिया देंगे।

इस बीच, भारत को फील्ड मार्शल मुनीर द्वारा सीमा पार आतंकवाद को बढ़ावा देने के निरंतर प्रयासों के लिए भी तैयार रहना चाहिए। एक अपरिपक्व और जल्दबाज ‘फील्ड मार्शल’ मुनीर के प्रचार और बढ़ती शक्तियों का पश्चिमी दुनिया द्वारा स्वागत किए जाने की संभावना नहीं है, क्योंकि पश्चिमी दुनिया को सुरक्षा, संरक्षा और परमाणु हथियारों के इस्तेमाल से संघर्षों को बढ़ाने की उनकी धमकियों के संभावित दुरुपयोग की चिंता है। उनका उतावला व्यवहार उन्हें एक खतरनाक व्यक्ति बनाता है जो पाकिस्तान की थल सेना, नौसेना, वायु सेना और उसके परमाणु शस्त्रागार पर पूरी तरह से नियंत्रण करना चाहेगा।

इसके बावजूद, चिढ़े हुए राष्ट्रपति ट्रंप ने आश्चर्यजनक रूप से जनरल मुनीर को राष्ट्रपति भोज देकर सम्मानित करने का फैसला किया, जाहिर है कि भारत द्वारा उनके स्वघोषित दावों को नकारने के बाद कि सीमाओं से आपसी वापसी को बढ़ावा देने में उनकी अहम भूमिका है, उन्हें यह पसंद नहीं आया।

यह तब हुआ जब भारत ने पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद का बदला लेने का अपना लक्ष्य पूरा कर लिया था। आखिरकार, राजनीतिक रूप से कमजोर और दिवालिया पाकिस्तान, जो लगातार दिवालियापन का सामना कर रहा है, अपने कार्यों से शायद ही कोई लाभ उठा सकता है, खासकर जब देश का नियंत्रण एक अजीबोगरीब फील्ड मार्शल के हाथों में है, जिसने भारत की विनाशकारी मारक क्षमता का सामना किया था, जिसमें भारी मात्रा में ‘मेड इन इंडिया’ हथियार इस्तेमाल किए गए थे।

महिलाओं के लिए शिक्षा बने रोजगार का साधन

सतत आर्थिक विकास, विशेष रूप से 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था और एक विकसित भारत का विजन, भारत की महिलाओं की क्षमता का पूर्ण उपयोग करने पर निर्भर करता है। इस अंतर को पाटने से भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 770 बिलियन डॉलर की वृद्धि हो सकती है।

तृप्ती सोमानी
लेखिका, स्तम्भकार हैं।

महिला साक्षरता और उच्च शिक्षा में उल्लेखनीय प्रगति दर्ज होने के बावजूद, भारतीय कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी चिंताजनक रूप से अपेक्षा के विपरीत कम बनी हुई है। महिला सशक्तिकरण सिद्धांतों (डब्लूईपी के अनुसार, भारत में महिला साक्षरता 77 प्रतिशत को पार कर गई है और अब उच्च शिक्षा में नामांकन में महिलाओं की हिस्सेदारी 48 प्रतिशत है। फिर भी, वर्ष 2023-24 में महिला श्रम बल भागीदारी दर (एफएलएफपीआर केवल 41.7 प्रतिशत ही रही है, जो वैश्विक औसत से काफी कम है। यह भारी असमानता शैक्षिक उपलब्धि और वास्तविक रोजगार परिणामों के बीच एक चिंताजनक अंतर की वास्तविकता को उजागर करती है।

असली मुद्दा यह है कि महिलाओं की शिक्षा पूरी करने के बाद आखिर क्या होता है? देश में विभिन्न कॉलेज और विश्वविद्यालय महिलाओं के बढ़ते नामांकन पर गर्व से प्रकाश डालते हैं, लेकिन बहुत कम लोग इस पर नजर रखते हैं या इसका समर्थन करते हैं कि इनमें से कितनी महिलाएं औपचारिक नौकरियों, उद्यमिता या नेतृत्व की भूमिकाओं में प्रवेश करती हैं। यह अनदेखी देश की लगभग आधी आबादी की उत्पादक क्षमता को कमजोर करती है।

डब्लूईपी के आंकड़ों के अनुसार, शैक्षणिक रूप से मजबूत महिला स्नातकों में से केवल 20 प्रतिशत ही औपचारिक कार्यबल में प्रवेश करती हैं या व्यवसाय शुरू करती हैं।

स्पष्ट रूप से, केवल योग्यताएं ही पर्याप्त नहीं हैं बल्कि महिलाओं को उनके पेशेवर सफर में अगला कदम उठाने में मदद करने के लिए एक अधिक सहायक पारिस्थितिकी तंत्र की सख्त जरूरत है।

एक व्यावहारिक और प्रभावशाली समाधान यह है कि राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग ढांचे (एनआईआरएफ) में एक महत्वपूर्ण मानदंड के रूप में रूपांतरण दर शिक्षा से रोजगार या उद्यमिता में बदलाव करने वाले छात्रों, विशेषकर महिलाओं का प्रतिशत - को शामिल किया जाए।

इसे संस्थागत रैंकिंग में शामिल करके, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों को शिक्षा से आगे बढ़कर वास्तविक दुनिया के परिणामों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। महिलाओं को प्रवेश देना और उन्हें शिक्षित करना ही पर्याप्त नहीं है, शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थानों को कार्यबल में उनकी सफलता को भी संभव बनाना होगा।

इस बदलाव के अंतर को पाटने के लिए, शैक्षणिक संस्थानों को सक्रिय रूप से संरचित करियर परामर्श, उद्यमिता प्रशिक्षण और मेंटरशिप कार्यक्रम प्रदान करने चाहिए।

विशेष रूप से महिलाओं के लिए डिजाइन किए गए नेतृत्व विकास पाठ्यक्रम आत्मविश्वास बढ़ाने, समुदाय-निर्माण कौशल विकसित करने और महत्वाकांक्षा को पोषित करने में मदद कर सकते हैं - उन्हें प्रभावशाली भूमिकाएँ निभाने और दूसरों को प्रेरित करने के लिए तैयार कर सकते हैं।

हालाँकि हाल के वर्षों में ऋछऋछफ में थोड़ी वृद्धि देखी गई है, लेकिन इस वृद्धि का अधिकांश हिस्सा स्व-रोजगार या अवैतनिक पारिवारिक कार्यों से आता है, खासकर ग्रामीण भारत में। रोजगार के ये रूप अक्सर टिकाऊ नहीं होते और वित्तीय स्वतंत्रता की गारंटी नहीं देते।

शहरी क्षेत्रों में, जहां प्रवेश स्तर की नौकरियों में महिलाओं की हिस्सेदारी 31 प्रतिशत है, वहीं नेतृत्व की भूमिकाओं में उनका प्रतिनिधित्व नाटकीय रूप से घटकर केवल 13 प्रतिशत रह गया है। यह लैंगिक असंतुलन न केवल गहरी जड़ें जमाए हुए संरचनात्मक मुद्दों को दर्शाता है, बल्कि भारत के विकसित राष्ट्र या विकसित भारत बनने की आकांक्षा के लिए एक बड़ी बाधा भी है।

शोध बताते हैं कि रोजगार में लैंगिक अंतर को पाटने से भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 770 अरब डॉलर तक की वृद्धि हो सकती है, जिससे देश की 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने की दिशा में प्रगति में उल्लेखनीय तेजी आएगी।

महिलाओं के लिए समान कार्यबल भागीदारी सुनिश्चित करना केवल निष्पक्षता का मामला नहीं है - यह एक रणनीतिक आर्थिक अनिवार्यता है। अब जवाबदेही का समय है। शैक्षणिक संस्थानों को न केवल प्रदान की गई डिग्रियों की, बल्कि अपने स्नातकों के वास्तविक जीवन के परिणामों की भी जिम्मेदारी लेनी चाहिए।

एनआईआरएफ रैंकिंग में रूपांतरण दरों को शामिल करके, हम उच्च शिक्षा परिदृश्य को एक ऐसे रूप में ढालना शुरू कर सकते हैं जो महिलाओं को कार्यबल में सफल होने के लिए सक्रिय रूप से सशक्त बनाता है। यह केवल एक नीतिगत सिफारिश नहीं है - यह कार्रवाई का आह्वान है।

यदि संस्थान और अधिकारी अपने लक्ष्यों को इस दृष्टिकोण के साथ संरेखित करते हैं, तो ‘महिला सशक्तिकरण’ एक नारे से बढ़कर एक मापनीय वास्तविकता बन जाएगा। भारत का आर्थिक इंजन अब अपनी आधी क्षमता पर चलने का जोखिम नहीं उठा सकता। समावेशी विकास की यात्रा वहीं से शुरू होती है जहाँ करियर शुरू होता है: हमारे कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में।

भारत एक ऐसे महत्वपूर्ण मोड़ पर खड़ा है जहाँ कार्यबल में महिलाओं को सशक्त बनाना न केवल एक नैतिक अनिवार्यता है, बल्कि एक रणनीतिक आर्थिक आवश्यकता भी है।

उच्च साक्षरता दर और उच्च शिक्षा में महिलाओं के बढ़ते नामांकन के बावजूद, कम महिला श्रम बल भागीदारी दर (एफएलएफपीआर) शिक्षा और रोजगार क्षमता के बीच एक गंभीर अंतर को उजागर करती है। राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग फ्रेमवर्क (एनआईआरएफ) में ‘रूपांतरण दर’ को एक मानक के रूप में शामिल करने से संस्थानों को यह सुनिश्चित करने के लिए जवाबदेह बनाया जा सकता है कि महिलाओं का कक्षाओं से करियर में संक्रमण हो।

करियर परामर्श, उद्यमिता सहायता और नेतृत्व प्रशिक्षण प्रदान करके, कॉलेज बदलाव के सच्चे उत्प्रेरक बन सकते हैं।

सतत आर्थिक विकास, विशेष रूप से 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था और एक विकसित भारत का विजन, भारत की महिलाओं की क्षमता का पूर्ण उपयोग करने पर निर्भर करता है।

इस अंतर को पाटने से भारत के सकल घरेलू उत्पाद में 770 बिलियन डॉलर की वृद्धि हो सकती है। अभी कार्य करने का समय है - जब हम महिलाओं को नेतृत्व के लिए सशक्त बनाते हैं, तो हम भारत को और अधिक मजबूत, तेज और अधिक समतापूर्ण विकास के लिए सशक्त बनाते हैं।

आप की बात

मेडिकल कालेजों में पीपीपी मॉडल

मेडिकल कॉलेजों में सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी) मॉडल का प्रयोग देश के कई राज्यों में किया गया है और कुछ हद तक यह सफल भी रहा है। सरकार का उद्देश्य है कि अधिक से अधिक लोगों को उच्च स्तरीय स्वास्थ्य सेवाएं सुलभ कराई जा सकें। इसी सोच के तहत सरकार ने निर्णय लिया है कि 300 बेड से कम वाले अस्पतालों को निजी क्षेत्र में सौंपा जाएगा, जहां एक निर्धारित संख्या में बिस्तरों पर गरीबों का निःशुल्क इलाज सुनिश्चित किया जाएगा। लेकिन व्यवहार में देखा गया है कि प्राइवेट सेक्टर द्वारा संचालित मेडिकल कॉलेज और अस्पताल अक्सर मुनाफाखोरी के केंद्र बन गए हैं। स्टूडेंट्स से मनमानी फीस वसूली जाती है और आम मरीजों से अत्यधिक शुल्क लिया जाता है। ये संस्थान अब सेवा नहीं, बल्कि एक ‘दुकानदारी’ बनकर रह गए हैं। अस्पतालों में दवाएं, जांचें और अन्य सेवाएं केवल उनके नेटवर्क से ही ली जा सकती हैं, बाहर से कुछ भी लाने की इजाजत नहीं होती, जिससे मरीजों की जेब पर भार पड़ता है। इसके साथ ही, मेडिकल शिक्षा की दशा भी चिंताजनक है। आज भी भारत में पुरानी पद्धतियों पर आधारित पाठ्यक्रम पढ़ाया जा रहा है, जबकि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और नई तकनीकों ने स्वास्थ्य क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिए हैं।

-**ऋषि सुभाष बुढ़ावन वाला**, रतलाम

अजित डोभाल की चुनौती

भारत सरकार के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजित डोभाल ने हाल ही में मद्रास आईआईटी के एक कार्यक्रम में संबोधित करते हुए आपरेशन सिंदूर पर वक्तव्य देते हुए पाकिस्तान सहित दुनिया भर के पाकिस्तानी समर्थकों को खुला चैलेंज किया है कि वह एक भी तस्वीर ऐसी दिखा दे जिससे भारत को कोई नुकसान हुआ हो ! बेकोल अजित दादा डोभाल भारत की एक ऐसी शख्सियत हे जो बोलते नही हे और न कहीं दिखते हे वह पर्दे के पीछे रहकर ऐसा चक्रव्यूह रचते हैं कि विरोधी और दुश्मन खुद ब खुद अपने आप उसमे उलझ कर दम तोड़ देते हैं ! अजित दादा का बनाया निशाना इतना सटीक होता है कि दुश्मन को पानी तक मांगने का समय नसीब नही होता हे ! बेशक अजित दादा डोभाल का नाम सुनते ही भारत विरोधी पाकिस्तान जैसे देशों की रूह कांप उठती हे क्योंकि पाकिस्तानी अच्छे से जानते हे कि उनको अब तक भारतीय सेना के हाथो जितने भी गहरे जख्म मिले हे वह सभी अजित दादा के दिमागी रणनीति का परिणाम है ! आपरेशन सिंदूर के स्थगित होने के बाद अपनी झूठी विजय का प्रोपोगेंडा करने वाले पाकिस्तानी हुक्मरान और उसके हारे हुए सेना प्रमुख अजित दादा की चुनौती सुनकर चुप्पी साढ़े बेठ गए हे !एक भी पाकिस्तानी हुक्मरान या उनके जनरल बने सेना प्रमुख मिया मुनीर भी अजित दादा की चुनौती पर कुछ बोलने की बजाय मुह सिये खड़े हैं !

- **अरविंद रावल**, झाबुआ, मप्र

बारिश में सावधानी जरूरी

पिछले कुछ समय से देश के विभिन्न हिस्सों में भारी बारिश हो रही है। राजस्थान,मध्य प्रदेश,उत्तर प्रदेश, बिहार, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, पंजाब समेत कई राज्यों में भारी बारिश व भूस्खलन के चलते जान व माल दोनों का नुकसान हो रहा है। इस भारी बारिश के दौरान देश प्रदेश की सभी नदियों में पानी पूरे वेग से (खतरे के निशान के ऊपर से) बह रहा है। जब नदी, नाले, झरने तालाब में पानी का बहाव तेज है, उसके बाद भी लोग अपनी जान को जोखिम में डालकर मौत को गले लगाने का खतरा मोल लेने से बाज नहीं आ रहे हैं। समय-समय पर शासन प्रशासन सभी को सावधान करता है। आखिर हम शासन प्रशासन को भी कब तक दोष देते रहेंगे। यह तो हमारी व्यक्तिगत जिम्मेदारी भी बनती है कि जब पुल पुलियाओं पर पानी है तो हमें खतरा मोल नहीं लेना चाहिए। गंगा मैया हो या नर्मदा मैया या अन्य नदियों में तेजी से पानी बह रहा है। लेकिन लोग (युवा बच्चे भी) रील बनाने के चक्कर में छलांगें लग रहे हैं। तो कई नदियों में तैरने के मोह में मौत को गले लगा लेते हैं। दुपहिया व चार पहिया वाले भी उफनती नदियों व नालों में वाहनों को डाल जोखिम मोल ले रहे हैं। सब्र व शांति किसे भी नहीं है। हम इंसान हैं, ना कि महामूर्ख ! ऐसे समय में खतरा उठाने का साहसिक प्रयास नहीं करना चाहिए।

- **हेमा हरि उपाध्याय**, उज्जैन

प्राथमिक स्कूलों पर ध्यान दें

उत्तर प्रदेश में इन दिनों प्राथमिक विद्यालयों को मर्ज करने का विवाद गरमाया हुआ है। जिन विद्यालयों में छात्रों की संख्या 50 से कम है उनका सरकार स्थानांतरण कर रही है। शिक्षकों एवं अभिभावकों में इसको लेकर रोष है। जगह जगह विरोध प्रदर्शन हो रहा है। विपक्ष इसको राजनीतिक स्टंट बनाकर हमलावर है।आजादी के बाद गांव- गांव तक शिक्षा का अलख जगाने के लिए सरकार द्वारा प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की गई। जिससे सभी को शिक्षा के समान अवसर प्राप्त हो सके। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में इन विद्यालयों की शिक्षा व्यवस्था पूरी तरह चरमरा गई है। छात्रों की संख्या कहीं नाममात्र की तो कहीं शून्य है। इसी बहाने सरकार अब स्कूलों को विलय कर रही है। सरकार का तर्क है कि इससे शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार एवं संसाधनों का बेहतर उपयोग होगा। फिलहाल सरकार चाहे जो भी दलील दे पर इतना तो तय है कि यह निर्णय अनेकों नन्हे-नन्हे कदमों को स्कूल की दहलीज तक जाने से रोक सकता है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम के तहत एक से पांचवीं तक के बच्चों को मुफ्त शिक्षा दी जा रही है, मुफ्त में किताबें कापियां एवं ड्रेस वितरित किए जा रहे है, मिड डे मील योजना के तहत पौष्टिक आहार दिए जा रहे हैं, प्रत्येक विद्यालय में योग्य शिक्षक नियुक्त हैं। इसके बावजूद भी सरकारी विद्यालयों में छात्रों संख्या कम हो रही है तो यह चिंतन का विषय है।

- **शिवेंद्र यादव**, कुशीनगर

7.9 करोड़ है बिहार में मतदाता। इनमें से करीब 4.96 करोड़ मतदाताओं के नाम 2003 में हुए पुनरीक्षण के दौरान मौजूद थे।

आजकल

फर्जी मतदाताओं का बढ़ता संकट

भारतीय लोकतंत्र तभी सुरक्षित रह सकता है, जब फर्जी वोटर मतदाता सूची से बाहर हों और असली मतदाता सम्मानपूर्वक अंदर। इसके लिए हर स्तर पर सजगता, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व आवश्यक है। लोकतंत्र केवल मतदान की प्रक्रिया नहीं, बल्कि नागरिकों की सहभागिता का जीवंत उत्सव है। यह उत्सव तभी सफल हो सकता है, जब उसमें केवल वास्तविक नागरिक ही भाग लें, न कि पहचान के छलावे में छिपे घुसपैठिए

डा. मोनिका राज
शोधार्थी

बिहार के बाद पूरे देश में मतदाता सूची पुनरीक्षण अभियान चलाने की आवश्यकता। एएनआइ

भारतीय लोकतंत्र की जीवंतता और उसकी व्यापकता का मूलाधार है- विश्वास। यह विश्वास मतदाता सूची की निष्पक्षता, चुनाव प्रक्रिया की पारदर्शिता और संवैधानिक संस्थाओं की निष्ठा पर टिका होता है। किंतु जब इस आधार में दरारें पड़ती हैं, तब न केवल लोकतंत्र की नींव हिलती है, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा और सामाजिक एकता भी संकट में पड़ जाती है। हाल में बिहार में मतदाता सूचियों के सत्यापन के दौरान सामने आई बातें इस संकट को और भी गंभीर बना देती हैं। चुनाव आयोग के प्रतिनिधियों को मिले इन संकेतों से कि बिहार में बड़ी संख्या में नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार जैसे देशों के नागरिक भी मतदाता सूची में शामिल हैं, यह स्पष्ट हो गया है कि यह केवल एक प्रशासनिक त्रुटि नहीं, बल्कि हमारे लोकतांत्रिक और राष्ट्रीय सुरक्षा तंत्र की असफलता भी है।

फर्जी मतदाताओं का मतदाता सूची में शामिल होना और वास्तविक भारतीय नागरिकों का नाम सूची से बाहर हो जाना, दोनों ही स्थितियां चुनाव की निष्पक्षता और लोकतंत्र की साख को प्रभावित करती हैं। यह समस्या केवल बिहार तक सीमित नहीं है, बल्कि बंगाल, असम, तमिलनाडु एवं केरल जैसे राज्यों में भी अवैध घुसपैठ और फर्जी मतदाताओं का मुद्दा उठता रहा है। इसलिए यह जरूरी है कि हम इस विषय की तह तक जाएं और हर पहलू को समझते हुए समाधान की राह निकालें। बिहार में इन दिनों विशेष सघन पुनरीक्षण (एसआइआर) की प्रक्रिया के दौरान बूथ-स्तरीय अधिकारी घर-घर जाकर मतदाताओं का सत्यापन कर रहे हैं। उन्होंने पाया है कि बड़ी संख्या में नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार मूल के लोग हैं, जो दस्तावेजों के आधार पर भारतीय मतदाता बन चुके हैं। आधार कार्ड, राशन कार्ड और वोटर आइडी जैसे दस्तावेज भी इनके पास हैं। यह सिर्फ चुनाव प्रक्रिया के साथ खिलवाड़ ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती भी है। भारत में नागरिकता का निर्धारण चुनाव आयोग का अधिकार क्षेत्र नहीं है, फिर भी मतदाता सूचियों में 'विदेशी मूल' के लोगों की मौजूदगी के संकेत खतरनाक है।

यह स्थिति इसलिए भी असहज है, क्योंकि कई बार सत्ताधारी दल चुनाव आयोग के निर्णयों को अपने हितों के अनुरूप ढालने का प्रयास करते हैं और विपक्षी दल इन अभियानों को राजनीति से प्रेरित बता कर विरोध करते हैं। बिहार के मामले में भी चुनाव आयोग के इस सत्यापन अभियान पर विपक्षी दलों ने आपत्ति जताई है। उन्होंने आरोप लगाया है कि यह कदम चुनाव से पहले कुछ विशेष वर्ग के लोगों को लक्षित करके उन्हें सूची से हटाने का प्रयास है। विपक्षी दलों की चिंता यह भी है कि जिन लाखों लोगों के नाम पुराने पुनरीक्षण (2003) में नहीं आए थे और जो अब भी जरूरी दस्तावेज नहीं जुटा पाए हैं, उन्हें भी सूची से बाहर किया जा सकता है। यह स्थिति अत्यंत दुविधापूर्ण है। एक ओर फर्जी मतदाताओं को सूची से हटाना लोकतंत्र की शुद्धता के लिए अनिवार्य है, वहीं दूसरी ओर गरीब, हाशिये पर रहने वाले और कम साक्षर नागरिकों को उनके अधिकार से वंचित करना भी अस्वीकार्य है। बिहार में स्थिति और भी विकट है, क्योंकि यहां साक्षरता दर देश में सबसे कम है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-5 के अनुसार बिहार में प्रजनन आयु की 40 प्रतिशत महिलाएं कभी स्कूल नहीं गईं। 2011 की जनगणना के अनुसार 29 प्रतिशत पुरुष पढ़ नहीं सकते। ऐसे में यह आशंका बढ़ जाती है कि गरीब, प्रवासी और अशिक्षित लोग दस्तावेजों के अभाव में अपने मताधिकार से वंचित हो सकते हैं। बिहार के 47 प्रतिशत मतदाता 40 वर्ष से कम आयु के हैं और इनमें से अधिकांश प्रवासी हैं, जो चुनाव से पूर्व ही अपने गृह राज्य लौटते हैं। इन प्रवासी नागरिकों के लिए निर्धारित समय में सभी दस्तावेज प्रस्तुत कर पाना एक चुनौती है। यदि उन्हें सूची से बाहर कर दिया गया, तो लोकतंत्र की समावेशिता पर गहरा आघात लगेगा। सुप्रीम कोर्ट ने इस संदर्भ में यह सुझाव दिया है कि आधार, वोटर आइडी, राशन कार्ड जैसे दस्तावेजों को भी नागरिकता के निर्धारण में स्वीकार किया जाए, ताकि कोई भी नागरिक अपने मताधिकार से वंचित न हो। चुनाव आयोग को इस दिशा में सजग रहना होगा।

अब आवश्यकता है एक संतुलित दृष्टिकोण की। अवैध प्रवासियों की पहचान कर उन्हें मतदाता सूची से हटाना अनिवार्य है, किंतु साथ ही देश के असली नागरिकों की पहचान कर उनका नाम सूची में शामिल करना भी उतना ही जरूरी है। यह दायित्व केवल चुनाव आयोग का नहीं, बल्कि केंद्र और राज्य सरकारों का भी है। गृह मंत्रालय को ऐसी स्पष्ट नीति बनानी चाहिए, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी भी विदेशी नागरिक को भारतीय दस्तावेज हासिल कर मतदाता बनने का अवसर न मिले। इसके लिए सीमावर्ती राज्यों में विशेष सतर्कता और तकनीकी निगरानी की भी आवश्यकता है। आज भारत जिस मोड़ पर खड़ा है, वहां सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि हम किसे 'नागरिक' मानें और किसे नहीं? चुनाव आयोग की भूमिका निष्पक्ष व्यवस्था बनाए रखने की है, न कि नागरिकता तय करने की। यदि आयोग फर्जी मतदाताओं को सूची से हटाता है, तो उसे यह भी सुनिश्चित करना होगा कि कोई वास्तविक भारतीय नागरिक उससे वंचित न रह जाए। यह कार्य केवल कागजी दस्तावेजों के आधार पर नहीं किया जा सकता, बल्कि एक समावेशी, मानवीय और संवैधानिक दृष्टिकोण से करना होगा।

भारत का लोकतंत्र तभी सुरक्षित रह सकता है, जब फर्जी वोटर बाहर हों और असली मतदाता सम्मानपूर्वक भीतर। इसके लिए हर स्तर पर सजगता, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व आवश्यक है। हमें यह याद रखना होगा कि लोकतंत्र केवल मतदान की प्रक्रिया नहीं, बल्कि नागरिकों की सहभागिता का जीवंत उत्सव है। यह उत्सव तभी सफल हो सकता है, जब उसमें केवल असली नागरिक ही भाग लें, न कि पहचान के छलावे में छिपे घुसपैठिए। एक जागरूक समाज, उत्तरदायी प्रशासन और पारदर्शी तंत्र ही लोकतंत्र की असली रक्षा-रेखा है।

घुसपैठ की समस्या पर लगानी होगी लगाम

बांग्लादेश, म्यांमार और नेपाल जैसे पड़ोसी देशों से भारत में घुसपैठ एक पुरानी समस्या रही है। असम और बंगाल में इसका व्यापक राजनीतिक और सामाजिक प्रभाव देखा गया है। भारत कोई धर्मशाला नहीं हो सकता कि हर संकटग्रस्त देश के नागरिक यहां आकर रहने लगें और फिर लोकतंत्र को प्रभावित करें। यह न केवल देश की सामाजिक संरचना को विकृत करता है, बल्कि सीमित संसाधनों पर बोझ भी बढ़ाता है। जब घुसपैठिए फर्जीवाड़ा कर जरूरी दस्तावेज प्राप्त कर वोटर बनते हैं, तो वे न केवल सरकारों की दिशा तय करते हैं, बल्कि वास्तविक भारतीय नागरिकों के अधिकारों का हनन भी करते हैं। दूसरी ओर, यह भी सच्चाई है कि अनेक वास्तविक भारतीय नागरिक- जैसे घुमंतू जनजातियां, गरीब, प्रवासी मजदूर, कचरा बीनने वाले, भिखारी और सीमावर्ती क्षेत्रों के लोग अपने अधिकारों से वंचित रह जाते हैं, क्योंकि वे 'प्रमाण' देने की स्थिति में नहीं होते। ऐसे में यह अत्यंत आवश्यक है कि सरकारें नागरिकता और मताधिकार के लिए डिजिटल समावेशन और सामाजिक जागरूकता की पहल करें।

केंद्र सरकार राष्ट्रीय नागरिकता रजिस्टर (एनआरसी) और राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर (एनपीआर) को लागू करना चाहती है, परंतु जब तक इन योजनाओं का निष्पक्ष, पारदर्शी और मानवीय आधार नहीं तैयार हो जाता, तब तक यह खतरा बना रहेगा कि फर्जी लोग अंदर आ जाएं। इसलिए नागरिकता और मतदान के अधिकार का निर्धारण केवल दस्तावेजों के आधार पर नहीं, बल्कि जांच-पड़ताल और मानवीय विवेक पर आधारित होना चाहिए। एनपीआर और एनआरसी दो अलग-अलग रजिस्टर हैं, जिनका उद्देश्य अलग-अलग है। एनपीआर एक व्यापक डाटाबेस है जिसमें भारत में रहने वाले सभी निवासियों का विवरण होता है, जबकि एनआरसी एक ऐसा रजिस्टर है जिसमें केवल भारतीय नागरिकों का विवरण होता है। एनपीआर को जनगणना के दौरान घर-घर जाकर गणना के माध्यम से तैयार किया जाता है। एनआरसी का उद्देश्य भारतीय नागरिकों की पहचान करना है।

सवाल केवल यह नहीं है कि अवैध घुसपैठिए कैसे दस्तावेज प्राप्त करते हैं, बल्कि यह भी है कि इन दस्तावेजों के वितरण में शामिल प्रशासनिक तंत्र की भूमिका क्या है? यदि नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार के नागरिक आधार कार्ड, राशन कार्ड, मतदाता पहचान पत्र जैसी भारतीय पहचान हासिल करने में सफल हो रहे हैं, तो इसका सीधा अर्थ यह है कि या तो प्रणाली में भ्रष्टाचार व्याप्त है या राजनीतिक संरक्षण उन्हें मिल रहा है। यह एक गंभीर प्रश्न है, जिसका उत्तर केवल सीमाओं पर सुरक्षा बढ़ा देने या मतदाता सूचियां पुनरीक्षित कर लेने से नहीं मिलेगा। इसके लिए जमीनी स्तर पर जवाबदेही सुनिश्चित करनी होगी- बूथ स्तर से लेकर जिला प्रशासन और राज्य सरकारों तक।

साथ ही यह आवश्यक हो गया है कि केंद्र सरकार नागरिकता और प्रवासन नीति को स्पष्ट रूप से परिभाषित करे। वर्तमान में देश के पास कोई एकीकृत प्रवासन नीति नहीं है, जिससे यह तय किया जा सके कि कौन शरणार्थी है, कौन घुसपैठिया, और किसे किस श्रेणी में नागरिकता मिलनी चाहिए।

कुलमिलाकर मतदाता सूची की शुद्धता एक सतत प्रक्रिया होनी चाहिए, न कि केवल चुनाव से पहले किया जाने वाला अभियान। इसके लिए तकनीक का बेहतर उपयोग, नागरिकों की डिजिटल पहचान का एकीकृत डाटाबेस और सभी राज्यों में समय-समय पर अद्यतन अभियान चलाना आवश्यक है। साथ ही मतदाता पंजीकरण और सत्यापन को स्कूल, पंचायत, नगर निकाय और सरकारी योजनाओं से जोड़कर अधिक सशक्त बनाया जा सकता है।

-डा. मोनिका राज

खरी-खरी

चलो रील बनाएं

धर्मेंद्र जोशी

बिना रील के रियल लाइफ अब नीरस लगने लगी है। जब तक रील बनाकर उसे इंटरनेट मीडिया की दहलीज तक पहुंचा नहीं दिया जाता, तब तक लोगों को अपने होने का अहसास नहीं होता है। लोग सुबह उठते ही इस पुनीत कार्य में अपने को संलग्न कर लेते हैं। किचन के बेलन से लेकर, खेत-खलिहान, पर्वत, मैदान और दैनंदिन कार्यों को जब तक रील बनाकर नहीं परोसते हैं, लोकप्रियता का स्थायी कब्जा बना रहता है।

जिनको संगीत का स्वर ज्ञान नहीं, वे बेसुरी आवाज में रील बनाकर वास्तविकता में खुद को हीरो साबित करने में तुले हुए हैं। जो पुरखों के बाग बगीचों का सौदा कर आए, वे रील में पेड़ों की महत्ता बता रहे हैं। जिनके घरों में सैकड़ों गैलन पानी व्यर्थ बह जाता हो, वे जल बचाने का संदेश रील बनाकर दे रहे हैं। जिन्होंने सच में लोगों से मीलों की दूरियां बना रखी हैं, वे रील बनाकर हम साथ-साथ हैं का दिखावा कर रहे हैं। हमारे पड़ोसी बब्बन जी को भी रील बनाने की लत लग चुकी है। रील बनाने का नशा इस कदर चढ़ा हुआ है कि दो मिनट की रील के चक्कर में पूरा जीवन लगाने को आतुर हैं। चलती ट्रेन में दरवाजे पर खड़े होकर संसार से उठ जाने की चेष्टा करते हैं। पहाड़ की अंतिम चोटी पर जाकर रील लीला में अपनी जीवन लीला खत्म करने का प्रयास करते दिखाई देते हैं। बच्चे स्कूल में पढ़ाई के बजाय रील बनाने का कोई भी मौका नहीं चूकते हैं।

रील बनाकर महिलाओं का सम्मान करने की भी होड़ मची हुई है, जबकि हकीकत में महिलाओं पर हिंसा और अत्याचार की घटनाएं तीव्रता से बढ़ी हैं। रील में मुस्कुराते चेहरे अंदर से अवसाद में डूबे हुए हैं। मदर्स और फादर्स डे पर माता-पिता के लिए शाब्दिक खजाना खोलने वाले छोटी-छोटी बातों पर उनको रोने पर मजबूर कर देते हैं। लोग श्मशानघाट पर भी शोक की घड़ी में रील बनाने का शौक पूरा करते देखे जा सकते हैं। हद तो तब हो जाती है, जब मृत्यु शैया पर लेटे व्यक्ति को उठाने के बजाय रील का लुत्फ उठाने में मशगूल हो जाते हैं।

ऐसा लग रहा है कि अगर रील नहीं बनाई तो यह मानव जीवन व्यर्थ ही गुजर जाएगा।

X पोस्ट

आटो ड्राइवर को मराठी न बोल पाने के लिए अपमानित करके आप किसी भाषा को महान नहीं बना सकते। मानव से भाषा है, भाषा से मानव नहीं।
मीनाक्षी जोशी@IMinakshiJoshi

खुले नाले में गिरने से लखनऊ के एक व्यक्ति की मौत हो गई और हंसते-खेलते परिवार की खुशियों पर ग्रहण लग गया। परिवार का इकलौता कमाने वाला चला गया। पंकज झा@pankajjha_

अक्सर ऐसे मामले सामने आते हैं कि यौन उत्पीड़न की पीड़ित महिलाओं के प्रति पर्याप्त या अपेक्षित संवेदनशीलता नहीं दिखाई जाती। इसका एक कारण पुलिस बल में महिला कर्मियों की संख्या कम होना भी है। आरके विज@ipsvijrk

आपरेशन सिंदूर के करीब दो माह बाद एनएसए अजीत डोभाल यह आधिकारिक नैरेटिव बनाने में लगे हैं कि भारत को कोई नुकसान हुआ हो तो ऐसा दावा करने वाले उसके साक्ष्य दिखाएं। यह बहुत देरी से उठाया गया कदम है, क्योंकि इस दौरान पाकिस्तान को दुष्प्रचार के लिए काफी गुंजाइश मिल गई।
मिन्हाज मर्चेंट@MinhazMerchant

जयकृष्ण वाजपेयी
राज्य ब्यूरो प्रमुख, बंगाल

बंगाल डायरी

अब बंगाल में मतदाता सूची सत्यापन पर रार

बंगाल में भी मतदाता सूची पुनरीक्षण की तैयारी। फाइल

बिहार के बाद बंगाल में मतदाता सूची सघन पुनरीक्षण (एसआइआर) अभियान शुरू होना है। इस बाबत केंद्रीय चुनाव आयोग का निर्देश भी आ चुका है। उसी अनुसार तैयारी भी अंतिम चरण में है, परंतु उससे पहले ही बांग्लाभाषी प्रवासी कामगारों को लेकर जिस तरह की राजनीति शुरू हुई है, वह बताने को काफी है कि बंगाल में एसआइआर पर बड़े विवाद की भूमिका तैयार हो चुकी है। दिल्ली और ओडिशा में बांग्लादेशी घुसपैठिये होने के मामले में हुई कार्रवाई को लेकर मुख्यमंत्री ममता बनर्जी से लेकर उनके दल के नेता जिस तरह से आक्रामक हैं और इसे बंगाली अस्मिता से जोड़कर भाजपा पर हमला कर रहे हैं, उससे स्पष्ट दिख रहा है कि बंगाल में एसआइआर शुरू होने पर ममता एवं उनके पार्टी नेताओं का रुख क्या होगा।

बिहार में एसआइआर के मुद्दे पर सुप्रीम कोर्ट में अपील करने वालों में तृणमूल की सांसद महुआ मोइत्रा भी शामिल हैं। दिल्ली एवं ओडिशा में बांग्लाभाषी प्रवासी कामगारों को पकड़े जाने का मामला भी कलकत्ता हाई कोर्ट पहुंच चुका है। ममता का आरोप है कि भाजपा शासित राज्यों में बांग्लाभाषी होने पर उन्हें बांग्लादेशी घुसपैठिया बताकर प्रताड़ित किया जा रहा है। तृणमूल ने रणनीति बनाई है कि सीमावर्ती क्षेत्रों में भाजपा को बंगाल और बांग्लाभाषी विरोधी बताते हुए प्रवासी कामगारों के उत्पीड़न के मुद्दे को जोर-शोर से उठाया जाए और इसे अभियान के रूप में आगामी वर्ष बंगाल में होने वाले विधानसभा चुनाव तक चलाया जाए। ममता खुद कोलकाता में सड़क पर उतरकर विरोध-प्रदर्शन करने वाली हैं।

इस मुद्दे पर तृणमूल और भाजपा में जुबानी जंग छिड़ चुकी है। तृणमूल सांसद और प्रवासी मजदूर कल्याण बोर्ड के अध्यक्ष समीरुल इस्लाम ने भाजपा के आइटी सेल के प्रमुख अमित मालवीय को चुनौती दी है कि वे साबित करें कि ओडिशा में पकड़े गए 444 प्रवासियों में से 335 के पास बंगाल सरकार द्वारा जारी किए गए फर्जी दस्तावेज हैं। गत दिनों मालवीय ने तृणमूल पर बांग्लादेशी प्रवासियों को फर्जी दस्तावेजों की सुविधा प्रदान करके घुसपैठ में सहायता करने और राष्ट्रीय सुरक्षा से समझौता करने का आरोप लगाया था। उन्होंने 'एक्स' पर लिखा कि तृणमूल भारत में बांग्लादेशी घुसपैठियों की बाढ़ ला रही है, जो दूसरे राज्यों में काम करते हैं, लेकिन ममता बनर्जी को वोट देने के लिए बंगाल लौट आते हैं। हर राज्य को बंगाल से जारी नकली दस्तावेजों वाले मजदूरों या कर्मचारियों को काम पर रखते समय बेहद सतर्क रहना चाहिए। यह सिर्फ जनसांख्यिकीय खतरा नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से भी चिंता का विषय है।

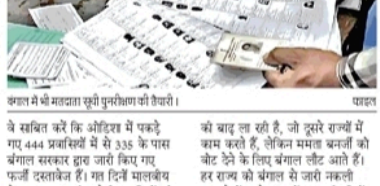

प्रदेश भाजपा के महासचिवों में से एक जगन्नाथ चटर्जी का कहना है कि बंगाल के वैध निवासियों और घुसपैठियों को एक बताकर ममता बनर्जी वास्तव में घुसपैठियों को वैध बनाने की कोशिश कर रही हैं। इसपर पलटवार करते हुए तृणमूल के राज्य महासचिव कुणाल घोष ने सवाल किया है कि जैसे बंगाल में घुसपैठिए पकड़े जा रहे हैं, वैसे ही त्रिपुरा में भी पकड़े जा रहे हैं तो इस अवैध घुसपैठ के लिए कौन जिम्मेदार है? गृह मंत्रालय घुसपैठ क्यों नहीं रोक पा रहा है? जगन्नाथ का कहना है कि घुसपैठियों की पहचान कर उन्हें बांग्लादेश वापस भेजने की भारत सरकार ने जो नीति बनाई है, वह सफल न हो, इसके लिए मुख्यमंत्री काम कर रही हैं। भाजपा नेता ने कहा है कि नई दिल्ली में नए बांग्लादेशी राजदूत की एक हफ्ते के भीतर पहली यात्रा कोलकाता की रही। वे राज्य सचिवालय नबान्न जाकर मुख्यमंत्री से मिले। हमें जानकारी है कि बांग्लादेश ने हमारे एक संघीय राज्य की मुख्यमंत्री से इस मामले की जांच करने का अनुरोध किया है, जिसमें अवैध घुसपैठियों को वापस बांग्लादेश भेजने की भारतीय नीति को चुनौती दी गई है। उन्होंने टिप्पणी की कि हमें विश्वास नहीं है कि बंगाल की मुख्यमंत्री किसी भी विदेशी राजदूत की सलाह पर कोई काम करेंगी, लेकिन बांग्लादेशी राजदूत के दिल्ली लौटने के अगले ही दिन मुख्यमंत्री ने इस मुद्दे को जोर-शोर से उठाया। भाजपा नेता की इस टिप्पणी पर कुणाल घोष का कहना है कि यह बिल्कुल बेतुकी बात है।

अभी तो सिर्फ प्रवासी कामगारों के मुद्दे पर इतना हंगामा बरपा है, जब एसआइआर शुरू होगा और घुसपैठियों के नाम मतदाता सूची से हटाए जाएंगे, तब क्या स्थिति बनेगी, उसकी इसे बानगी मान सकते हैं। इससे पहले बंगाल में मतदाता सूची सघन पुनरीक्षण अभियान 2002 में हुआ था। उस समय 28 लाख लोगों के नाम हटे थे। अब तो स्थिति और भी गंभीर है। इसलिए इस मुद्दे पर अभी से ही तृणमूल से लेकर वामपंथी दलों और कांग्रेस ने बयानबाजी शुरू कर दी है।

जागरण जनमत कल का परिणाम

क्या बिहार की मतदाता सूची में विदेशियों की मौजूदगी का संकेत राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा है।

सभी आंकड़े प्रतिशत में।

आज का सवाल
क्या अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर कुछ भी पोस्ट करने की आजादी होनी चाहिए?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।

जनपथ

वोटर होयं पड़ोस के देशों के इंपोर्ट,
एक्शन ले आयोग तो पहुंच जायंगे कोर्ट।
पहुंच जायंगे कोर्ट मामला जिससे लटके,
आकर फर्जी लोग चुनें 'उनको' बेखटके।
ठेंगे पर कानून न रहता कोई भी डर,
जब बाहर के लोग बनें भारत में वोटर!
- ओमप्रकाश तिवारी

मंथन

शिशिर शुक्ला
विभागाध्यक्ष, भौतिकी विभाग, स्वामी शुकदेवानंद महाविद्यालय, शाहजहांपुर

शोध-नवाचार को मिलती गति

विज्ञान एवं तकनीकी विकास के शिखर तक तभी पहुंच सकती है जब निवेश के रूप में उसे पर्याप्त समय, परिश्रम एवं आर्थिक सहयोग भी प्राप्त हो

प्रतीकात्मक

हाल में अनुसंधान, विकास एवं नवाचार के लिए वित्तीय सहायता के रूप में एक लाख करोड़ रुपये की मंजूरी दी गई। यह फैसला प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अध्यक्षता में हुई कैबिनेट बैठक में लिया गया। उल्लेखनीय है कि इस फंड के माध्यम से उन सभी इकाइयों एवं सेक्टरों को वित्तीय मदद दी जाएगी, जो देश को आत्मनिर्भर बनाने के साथ-साथ आर्थिक सुरक्षा जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे पर कार्य कर रहे हैं। योजना की विस्तृत रूपरेखा प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली अनुसंधान नेशनल रिसर्च फाउंडेशन (एएनआरएफ) की गवर्निंग काउंसिल द्वारा तैयार की जाएगी। योजना के अमल हेतु विज्ञान एवं तकनीकी विभाग नोडल एजेंसी के रूप में कार्य करेगा। निःसंदेह आज के बदलते हुए परिदृश्य में यह एक दूरदर्शितापूर्ण एवं बहुआयामी कदम है।

विज्ञान एवं तकनीकी विकास के शिखर तक तभी पहुंच सकती है जब निवेश के रूप में उसे पर्याप्त समय, परिश्रम एवं आर्थिक सहयोग भी प्राप्त हो। एआइ, क्वांटम टेक्नोलाजी एवं ग्रीन एनर्जी, ये ऐसे क्षेत्र हैं, जो संभवतः हमारे भविष्य को नियंत्रित करेंगे। इसलिए यह आवश्यक है कि अभी से ही इनको गहराई के साथ समझने एवं विश्लेषण करने का प्रयास किया जाए। अनुसंधान एवं नवाचार किसी भी विषय की सुंदरता एवं व्यापकता में चार चांद लगाने का कार्य करते हैं। किसी भी राष्ट्र की सामाजिक, आर्थिक एवं तकनीकी प्रगति के लिए यह नितांत आवश्यक है कि वह अपना एक महत्वपूर्ण निवेश अनुसंधान एवं नवाचार की दिशा में भी करे। आज के प्रतिस्पर्धात्मक परिदृश्य में शोध एवं नवाचार आत्मनिर्भरता, विकास एवं वैश्विक पटल पर अपना नाम अंकित करने का मार्ग खोलते हैं। आज अपने-अपने स्तर से एआइ को जीवन में प्रयोग करने की चेष्टा अनवरत जारी है। पर्यावरण प्रदूषण एवं ग्लोबल वार्मिंग जैसे ज्वलंत मुद्दों ने हरित ऊर्जा पर निर्भरता की आवश्यकता को काफी हद तक बढ़ा दिया है। इसके अतिरिक्त क्वांटम प्रौद्योगिकी ने अभूतपूर्व परिणामों को प्रस्तुत करके तकनीकी के स्वरूप में एक आमूलचूल परिवर्तन कर दिया है। इन सभी बिंदुओं के आधार पर यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि अगर प्रौद्योगिकी के इन उभरते हुए क्षेत्रों को शोध एवं नवाचार के माध्यम से सतत रूप से विकसित करने का प्रयास न किया गया तो भविष्य में कहीं न कहीं हम इनके आगे बेबस महसूस करेंगे।

वित्तीय सहायता ही एक ऐसी कुंजी है, जिसके माध्यम से शोधार्थी अपनी कल्पनाओं एवं जिज्ञासाओं को व्यावहारिक धरातल पर उतारकर उसे एक व्यवस्थित रूप देने का प्रयास कर सकता है। वित्तीय सहायता व्यस्ततम दिनचर्या वाले शोधार्थी को एक मानसिक प्रोत्साहन प्रदान करती है। किसी भी विषय पर शोध एक दीर्घकालिक चिंतन, मनन एवं परिश्रम का परिणाम होता है। स्पष्ट सी बात है कि समय का इतना बड़ा निवेश एवं जोखिम बिना आर्थिक मदद के संभव नहीं है। यद्यपि विगत कुछ वर्षों में भारतवर्ष ने शोध एवं नवाचार के क्षेत्र में काफी प्रगति की है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन, भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन, स्टार्टअप इंडिया मिशन, पीएम रिसर्च फेलोशिप इत्यादि संस्थाओं एवं योजनाओं के माध्यम से शोधार्थियों को लगातार प्रोत्साहित किया जाता है। वर्ष 2024 के वैश्विक नवाचार सूचकांक में भारत 39वें स्थान पर रहा, जो कहीं न कहीं भारत की प्रगति का सूचक है। एक रिपोर्ट के अनुसार अनुसंधान एवं विकास हेतु निवेश में भारत ने विगत एक दशक में तीन गुना की वृद्धि की है, जो निःसंदेह एक सकारात्मक उपलब्धि है। किंतु अभी भी बहुत सी ऐसी कमियां हैं, जिनको दूर करना बाकी है। उदाहरण के लिए अनुसंधान हेतु उन्नत प्रयोगशालाओं एवं उपकरणों का अभाव, रिसर्च फेलोशिप एवं अन्य योजनाओं के क्रियान्वयन की धीमी गति, पर्याप्त बुनियादी ढांचे का अभाव इत्यादि।

एक रिपोर्ट जो कि चिंतित करने वाली है वह यह कि भारत उच्च शिक्षा संस्थानों एवं उद्योग के बीच अनुसंधान एवं विकास सहयोग के मामले में पूरे विश्व में 86वें स्थान पर है, जो कहीं न कहीं निराशाजनक है। आज शिक्षा एवं उद्योग के बीच एक गहरा संबंध स्थापित करने की आवश्यकता है, जो केवल और केवल शोध एवं नवाचार को बढ़ावा देकर ही संभव है। भारत में सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी का लगभग 0.64 प्रतिशत ही शोध एवं अनुसंधान पर खर्च किया जाता है। इस व्यय को बढ़ाने की महती आवश्यकता है, ताकि शोध एवं नवाचार को पर्याप्त गति मिल सके। अगर हम अन्य देशों की बात करें तो अमेरिका (2.7 प्रतिशत), दक्षिण कोरिया (4.5 प्रतिशत) और इजरायल (4.9 प्रतिशत) जैसे देश इस मामले में हमसे कहीं आगे हैं।

****

www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
मंगलवार 15 जुलाई, 2025

दैनिक जागरण

करुणा का भाव व्यक्ति को विनम्र बनाता है

आयकर विभाग की छापेमारी

आयकर विभाग को राजनीतिक चंदे के फर्जी बिल लगाने वालों के खिलाफ देश भर में बड़े पैमाने पर छापेमारी करनी पड़ी। राजनीतिक चंदे के फर्जी बिल लगाकर आयकर से बचने का काम पहले भी होता रहा है। माना जाता था कि इसमें कुछ कमी आई होगी, लेकिन लगता है कि स्थिति जस की तस है। यदि वास्तव में ऐसा है तो इसका मतलब है कि राजनीतिक चंदे और आयकर संबंधी कानून ऐसे हैं कि लोग उनका दुरुपयोग आसानी से कर लेते हैं। यदि नियम-कानून कमजोर होंगे तो लोग उन्हें तोड़ने का काम करेंगे ही। यह ठीक है कि लोगों को जिम्मेदार होना चाहिए, लेकिन आखिर सरकार की भी तो कोई जिम्मेदारी बनती है। समझना कठिन है कि वह राजनीतिक चंदे और आयकर से जुड़े कानून इस तरह के क्यों नहीं बना पा रही है कि उनका न्यूनतम दुरुपयोग हो सके और यदि लोग दुरुपयोग करें तो आसानी से पकड़ में आ जाएं। बात केवल आयकर कानूनों की विसंगतियों की ही नहीं है। टैक्स संबंधी अन्य कानून भी खामियों से पूरी तौर पर मुक्त नहीं किए जा सके हैं। आयकर की तरह जीएसटी की भी चोरी होती है। लोग टैक्स बचाने के उपाय करें, यह तो समझ आता है, लेकिन अपने देश में इसके नाम पर कर चोरी खूब होती है। यह ठीक है कि कर संग्रह बढ़ रहा है, लेकिन उतना नहीं, जितना बढ़ना चाहिए। वैसे तो टैक्स चोरी दुनिया भर में होती है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि भारत में भी वह होती रहे और उस पर कोई प्रभावी लगाम न लग पाए। टैक्स चोरी अमीर तबका भी करता है और उसकी देखादेखी मध्यमवर्ग भी। टैक्स चोरी पर शायद पूरी तौर पर तो रोक नहीं लगाई जा सकती, लेकिन टैक्स चुराने वाले लोगों के मन में कानून का थोड़ा भय भी होना चाहिए।

यह शुभ संकेत नहीं कि अपने देश में तमाम दावों के बाद भी टैक्स ढांचे में पर्याप्त सुधार नहीं किया जा सका है। पता नहीं टैक्स ढांचे में जरूरी सुधार करने में देरी क्यों हो रही है? जो भी हो इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि नोटबंदी के बाद यह जो दावा किया गया था कि नकदी का चलन कम हो जाएगा, वह थोथा ही साबित हुआ। किसी को इस पर विचार करना चाहिए कि नकदी का इतना अधिक चलन क्यों है? भ्रष्टाचार में नकदी की एक बड़ी भूमिका है। इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि भ्रष्ट नेताओं, नौकरशाहों के पास से करोड़ों-अरबों रुपये की नकदी मिलती ही रहती है। यदि नेताओं, नौकरशाहों की रिश्वतखोरी पर सचमुच लगाम लगानी है तो नकदी के चलन को कम करना होगा और मनी ट्रेल का पता लगाने की कोई ठोस व्यवस्था भी करनी होगी। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो इस तरह के दावों का कोई मतलब नहीं कि मोदी सरकार भ्रष्टाचार पर एक हद तक अंकुश लगाने में सफल रही है।

खेल को प्रोत्साहन

पंजाब सरकार खेल और खिलाड़ियों को लेकर जिस प्रकार की गंभीरता दिखा रही है वह स्वागतयोग्य है। पंजाब कभी खेलों में अव्वल होता था, लेकिन धीरे-धीरे प्रदेश में नशे ने अपनी जड़ें जमानी आरंभ कर दीं और युवा इस दलदल में धंसते चले गए। इस बात की आवश्यकता लंबे समय से अनुभव की जा रही थी कि युवाओं को नशे से दूर करने के लिए प्रदेश में खेलों को बढ़ावा दिया जाए। अब मुख्यमंत्री भगवंत मान ने प्रदेश में तीन हजार से अधिक आधुनिक खेल मैदान बनाने की घोषणा करके इसी दिशा में सकारात्मक कदम बढ़ाया है। निस्संदेह इससे खेलों के प्रति युवाओं का आकर्षण बढ़ेगा। सरकार ने यह भी कहा है कि इन मैदानों पर खिलाड़ियों के उचित अभ्यास आदि के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रदर्शन कर चुके खिलाड़ियों का भी सहयोग लिया जाएगा। इससे इन खिलाड़ियों को रोजगार भी उपलब्ध होगा। इससे पूर्व गत दिवस मुख्यमंत्री ने पंजाब में विश्व स्तरीय क्रिकेट खिलाड़ी तैयार करने के उद्देश्य से शेर-ए-पंजाब महाराजा रणजीत सिंह क्रिकेट लीग आरंभ करने की भी वकालत की थी। सरकार पूर्व में एक हजार खेल नर्सरी खोलने की घोषणा भी कर चुकी है। यदि सरकार सही दिशा में आगे बढ़ी और घोषणाओं को धरातल पर उतारने में सफल रही तो निश्चित रूप से इससे युवा पीढ़ी और पंजाब का भला ही होगा।

> यदि सरकार सही दिशा में आगे वढ़ी और घोषणाओं को धरातल पर उतारने में सफल रही तो निश्चित रूप से इससे युवा पीढ़ी और पंजाव का भला ही होगा

मताधिकार और नागरिकता का पेचीदा सवाल

अरविंद जैन

मतदाता सूची पुनरीक्षण से जुड़े सवाल केवल बिहार विधानसभा चुनाव तक ही सीमित नहीं रहेंगे। इनकी गूंज आने वाले चुनावों में भी सुनाई देगी

बिहार में मतदाता सूची की विशेष गहन समीक्षा मामले पर सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई हुई। इस मामले में विपक्षी दलों की ओर से पैरवी में लगे वकील-सांसद कपिल सिब्बल और अभिषेक मनु सिंघवी ने दलील दी थी कि इस समीक्षा की आड़ में निर्धन, अशिक्षित, दलित और वंचित तबके के लोगों को मतदाता सूची से बाहर करने का षड्यंत्र किया जा रहा है और सत्ताधारी दल के इशारे पर चुनाव आयोग मनमानी कर रहा है। जब चुनाव आयोग के वकील राकेश द्विवेदी ने कहा कि मताधिकार के लिए नागरिकता अनिवार्य है और आधार, राशन, चुनाव, पैन कार्ड आदि को नागरिक होने का प्रमाण नहीं माना जा सकता तो न्यायमूर्ति सुधांशु धूलिया और जायमल्या बागची ने कहा कि नागरिकता की जांच का काम तो गृह मंत्रालय का है, न कि चुनाव आयोग का। इस पर आयोग की ओर से जवाब दिया गया कि उसे अनुच्छेद 326 के तहत अधिकार प्राप्त हैं।

फिलहाल सुप्रीम कोर्ट ने मतदाता सूची के पुनरीक्षण पर रोक लगाने से इन्कार कर दिया है। अब 28 जुलाई को मामले की अगली सुनवाई होगी। पुनरीक्षण प्रक्रिया जारी रखने की हरी झंडी दिखाने के साथ ही शीर्ष अदालत ने इस प्रक्रिया में पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए आधार, वोटर, राशन कार्ड आदि दस्तावेजों को मान्य करने का सुझाव देते हुए मतदाता सूची अधिसूचित करने से पहले सभी पक्षों को अवगत कराने का भी निर्देश दिया। यह निर्देश भी दिया कि बिना अवसर दिए किसी का नाम न हटाया जाए। चुनाव आयोग 2003 के बाद मतदाता बने व्यक्तियों की नागरिकता संबंधी दस्तावेजों की जांच में आधार, राशन या चुनाव कार्ड को प्रामाणिक दस्तावेज नहीं मान रहा था। संवैधानिक संस्था होने के नाते चुनाव आयोग को सुप्रीम कोर्ट के सुझावों-निर्देशों का सम्मान करना ही चाहिए, पर इस बार दुविधा बहुत बड़ी है। पेच इस पहलू में फंसा हुआ है कि मतदाता होने के लिए भारत का नागरिक होना अनिवार्य है और नागरिकता संशोधन कानून के अनुसार नागरिकता के लिए विशेष रूप से 2004 के बाद भारत में पैदा हुए व्यक्ति को यह प्रमाणित करना अनिवार्य है कि जन्म के समय उसके माता-पिता भारत के नागरिक थे/हैं। अथवा दोनों में से एक नागरिक है और 'घुसपैठिया' नहीं है। यही वह वर्ग है जो पहली बार मतदाता बनेगा। ऐसे में इस कवायद से जुड़े तमाम सवाल केवल बिहार चुनाव और वहां की मतदाता सूची तक ही सीमित नहीं रहेंगे। इसकी गूंज आने वाले चुनावों में भी सुनाई देगी। बिहार में मतदाता सूची पुनरीक्षण के दौरान नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार जैसे देशों के लोगों के नाम आने के संकेतों के बीच इसकी मांग जोर पकड़ रही कि मतदाता सूची सत्यापन का काम पूरे देश में किया जाए। चुनाव आयोग ने ऐसा करने को कहा भी है।

अवधेश राजपूत

सैद्धांतिक रूप से भारतीय नागरिकता जन्म और निवास के आधार पर तय की गई है। संविधान लागू होने के कुछ समय बाद भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955 में प्रविधान किया गया कि अगर किसी व्यक्ति का भारत में जन्म हुआ है तो उसे भारत का नागरिक माना-समझा जाएगा। नागरिकता कानून में जनवरी, 2004 से संशोधन किया गया कि 7 जुलाई, 1987 के बाद, किंतु 7 जनवरी, 2004 से पहले भारत में पैदा हुआ व्यक्ति भारत का नागरिक माना-समझा जाएगा, बशर्ते जन्म के समय उसके माता या पिता भारत के नागरिक हों। 7 जनवरी, 2004 के बाद जन्मा व्यक्ति भारत का नागरिक तभी होगा, जब उसके माता-पिता भारत के नागरिक हों या दोनों में से एक भारत का नागरिक हो और दूसरा 'घुसपैठिया' न हो। नागरिकता कानून को लेकर सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि जन्म और मृत्यु पंजीकरण अधिनियम, 1970 उस साल एक अप्रैल से लागू हुआ। 1970 से पहले जन्म या मृत्यु का पंजीकरण अनिवार्य नहीं था। इसलिए हर नागरिक के पास जन्म प्रमाण पत्र होना असंभव है। हालांकि 1970 के बाद जन्में तमाम नागरिकों के पास भी जन्म प्रमाण पत्र नहीं होगा। अधिकांश के पास पासपोर्ट, राशन कार्ड, आधार, पैन और ड्राइविंग लाइसेंस जैसे दस्तावेज तो हैं, लेकिन माता-पिता के जन्म का प्रमाण पत्र नहीं होगा। पासपोर्ट भारतीय नागरिकों को ही जारी किया जाता रहा है, मगर वह भी सिर्फ यात्रा दस्तावेज है। देसी-विदेशी महिला (पुरुष) से विवाह का पंजीकरण अभी तक अनिवार्य नहीं है। अनाथ और लावारिस व्यक्तियों की नागरिकता का क्या होगा? एकल या अविवाहित मांओं के बारे में भी सोचना पड़ेगा या नहीं? 2015 में सर्वोच्च न्यायालय ने एबीसी बनाम दिल्ली राज्य जैसे मामले में फैसला सुनाया था कि अविवाहित मां को अपने बच्चों की संरक्षता के लिए पिता की मंजूरी की जरूरत नहीं होगी। उसके आदेश में कहा गया था कि जब भी किसी एकल अभिभावक या अविवाहित मां अपने बच्चे के जन्म प्रमाण पत्र के लिए आवेदन करे तो सिर्फ एक हलफनामा पेश किए जाने पर बच्चे का जन्म प्रमाण पत्र जारी कर दिया जाए। इस निर्णय के बावजूद जन्म प्रमाण पत्र के लिए 'आनलाइन रजिस्ट्रेशन सिस्टम' में अभी भी बच्चे के पिता का नाम बताना अनिवार्य है। अन्यथा पंजीकरण संभव नहीं। यदि किसी मामले में मां की उम्र 18 साल से कम (नाबालिग) है तो मौजूदा 'सिस्टम' सूचना स्वीकार नहीं करता। अगर 2025 में भी जन्म प्रमाण पत्र लेना इतना आसान नहीं तो अनुमान लगाया जा सकता है कि बिहार या बंगाल में वोट बनवाना कितना मुश्किल काम हो सकता है।

राजनीतिक प्रयोगशाला में देर-सबेर नागरिकता संशोधन कानून अपनी उपयोगिता निभा सकता है, लेकिन न्यायपालिका भी सत्ता का आईना है, जिसमें लोकतंत्र की नाव यथार्थ से थोड़ी दूर, मगर सुरक्षित दिखाई देती है। बहस के दौरान की गई अदालती टिप्पणियां फैसलों में प्रायः विलुप्त हो जाती हैं। देश में कानून का राज है, किसी दल विशेष का नहीं। इसलिए कानून का पालन और न्याय व्यवस्था में अटूट आस्था बनाए-बचाए रखना जरूरी है। मताधिकार के लिए नागरिकता अनिवार्य तो है, लेकिन चुनावी फायदे के लिए कानून को राजनीतिक अखाड़ा बनाना लोकतंत्र के लिए ठीक नहीं होगा।

(लेखक सुप्रीम कोर्ट में वरिष्ठ वकील हैं)
response@jagran.com

भारत के इस्लामीकरण का छांगुर तंत्र

अवधेश कुमार

दूसरी सरकारों में छांगुर और उसके मजहबी उन्मादी सहयोगी इस्लामीकरण का पूरा माफिया तंत्र कायम कर चुके होते

उत्तर प्रदेश के बलरामपुर में हिंदुओं को मुसलमान बनाने का जैसा तंत्र सामने आया, वह देश के लिए चेतावनी है। यह एक व्यक्ति केंद्रित हिंदुओं को मुसलमान बनाने का ऐसा बड़ा तंत्र है, जो कंपनी की तरह व्यवस्थित है, जिसकी अनेक परतें हैं, जिसमें हिंदुओं को फंसाने, बरगलाने के लिए युवक-युवतियों की फौज सक्रिय है। छांगुर उर्फ जिंदा पीर उर्फ जलालुद्दीन को जिन्होंने कपड़े, अंगूठी, नग, माला देते देखा होगा, उन्होंने सपने में भी उसके इस रूप की कल्पना नहीं की होगी। ऐसा व्यक्ति, जिसका अपने समाज में भी अधिक महत्व न हो, वह 500 करोड़ से ज्यादा का साम्राज्य खड़ा कर ले, विदेश में भी उसका नेटवर्क हो जाए, हिंदू लड़कियों-महिलाओं को मुसलमान बनाता रहे और उसके विरुद्ध शिकायत करने वाले की ही शामत आ जाए तो इसके विश्लेषण के लिए शब्द ढूंढ़ने पड़ेंगे। बलरामपुर का मधुपुर गांव उत्तर प्रदेश एटीएस यानी आतंक विरोधी दस्ता, पुलिस, प्रशासनिक अधिकारियों, आयकर विभाग, ईडी से लेकर मीडिया की गतिविधि का केंद्र बना है। प्राथमिक सूचना थी कि वह लगभग 1,500 हिंदुओं को छल-बल से इस्लाम में ला चुका है, किंतु यह संख्या ज्यादा हो सकती है। उसका कई बीघे में बना हुआ आलीशान मकान था, जिसका निर्माण ऐसा था कि लोगों को बंद कर कुछ भी कर दिया जाए तो पता न चले।

छांगुर की कहानी पर सहसा विश्वास नहीं होता। उसने पत्नी को प्रधानी का चुनाव लड़वाया, वह दो बार जीती और क्षेत्र में उसका कद बढ़ा। नीतू और नवीन के मुसलमान बनने के दस्तावेज दुबई के हैं। दोनों के 19 बार दुबई जाने के रिकार्ड हैं, जिनमें केवल एक बार साथ गए। अजीब रहस्य है। ईसाई मिशनरियां दलितों और जनजातियों को लक्ष्य बनाकर उनका मतांतरण कराती हैं। उनके पास हर क्षेत्र का जनसांख्यिकीय डाटा है। छांगुर ने भी शायद वहीं से डाटा हासिल किया और उत्तर प्रदेश के अलावा अन्य ऐसे जिलों की पहचान की, जहां हिंदू युवतियों-महिलाओं को मुस्लिम बनाने का योजनाबद्ध अभियान चलना था।

छांगुर भारत के इस्लामीकरण में लगा था। यह उसके अकेले के दिमाग की उपज नहीं हो सकती।

बलरामपुर में जलालुद्दीन का आलीशान भवन। एएनआइ

हिंदू जाति व्यवस्था पर तंज कसने वाले ध्यान रखें कि बड़ी संख्या में सवर्ण लड़कियों ने छांगुर तंत्र के दबाव-प्रभाव में इस्लाम कुबूल किया। नीतू वोरा और नवीन वोरा नसरीन और जमालुद्दीन कैसे बन गए? मुंबई में व्यापार करने वाले दोनों पति-पत्नी छांगुर की हिंदुओं के इस्लामीकरण की कल्पना को साकार करने में जुट गए। आखिर क्यों?

कोई अपने विचार से मजहब बदले, यह उसका अधिकार है। किंतु धन, बाहुबल और हर तरीके से जाल में फंसाकर, विवश कर इस्लामीकरण का यह तंत्र माफिया गिरोह जैसा था। शायद छांगुर का भयानक तंत्र कायम रहता, यदि चंगुल में फंसी कुछ लड़कियां, महिलाएं बाहर नहीं आतीं। एक घटना में अनाम से संगठन विश्व हिंदू रक्षा परिषद ने जब लखनऊ में कुछ लोगों की हिंदू धर्म में वापसी का हवन किया, तब संज्ञान में आया कि छांगुर इन सबके पीछे है। एक व्यक्ति हिंदुओं को मुस्लिम बनाने की कारपोरेट शैली में कंपनी खड़ी कर उत्तर प्रदेश से विदेश तक विस्तारित कर लेता है और पुलिस, प्रशासन, जनप्रतिनिधियों को इतने वर्षों तक पता नहीं चलता। छांगुर ने मुख्य मार्ग से अपने घर तक सड़क बना ली। पुलिस प्रशासन में हैसियत ऐसी कि उसके सहयोगी ने पुलिस में शिकायत की तो उसके विरुद्ध ही मुकदमा दर्ज हो गया। एक स्थानीय मुस्लिम उसके बारे में पत्र लिखते रहे, लेकिन कहीं सुनवाई नहीं हुई। उसके खातों में विदेश से पैसे आते रहे और केंद्रीय एजेंसियों के कान खड़े नहीं हुए। इसके अर्थ क्या हैं?

बिहार में तीन वर्ष पहले पीएफआइ के 2047 तक भारत को गजवा-ए-हिंद बनाने के तंत्र से जुड़े मामले में भी फुलवारी शरीफ के मुस्लिम पुलिस अधिकारी के मोबाइल पर खतरनाक मैसेज आया, पर उसकी शिकायत को फाइलों में बंद कर दिया गया। ऐसा अनेक मामलों में होता है। केंद्र और कई प्रदेशों में भाजपा की सरकारों के आने से स्थिति बदली है और भाजपा सरकारों के कारण ही यह कार्रवाई संभव हो सकी। दूसरी सरकारों में तो छांगुर और उसके मजहबी उन्मादी सहयोगी इस्लामीकरण का पूरा माफिया तंत्र कायम कर लेते। यह स्वीकारना होगा कि मतांतरण, लव जिहाद और मजार आदि के नाम जमीन कब्जा करने आदि मामलों की आरंभिक शिकायतों को पुलिस प्रशासन गंभीरता से नहीं लेता।

त्रासदी देखिए कि अभी तक भाजपा विरोधी पार्टियों, नेताओं, एक्टिविस्टों में से किसी ने इस बड़े कांड पर सामान्य विरोधी प्रतिक्रिया भी व्यक्त नहीं की। क्या निर्दोष, निरपराध हिंदू लड़कियों, महिलाओं की इज्जत, गरिमा और उनके मानवाधिकार का महत्व नहीं? ऐसे मामलों में भाजपा ही हिंदुओं के साथ खड़ी दिखती है। यह मामला यह भी बताता है कि रवैये में व्यापक बदलाव की आवश्यकता है। एक बड़ा पहलू यह है कि छोटे-छोटे मदरसे चलाने वाले मौलवी भी इतनी विदेश यात्राएं क्यों और कैसे करते हैं? उनके पास इतनी सुख-सुविधाएं कहां से आईं? कुछ वर्षों के उनके पासपोर्ट-वीजा तथा नामी-बेनामी संपत्तियों पर नजर डालने की आवश्यकता थी और है। सनातनियों को समझना चाहिए कि उनके विरुद्ध घात लगाए शिकारियों का झुंड बैठा है। वे उनके मुकाबले के लिए तैयार नहीं होते तो उनका संकट बढ़ना तय है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)
response@jagran.com

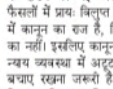

ऊर्जा

बाल संस्कार

बच्चे किसी भी परिवार, समाज और राष्ट्र की निधि होते हैं। वही भविष्य के कर्णधार बनते हैं। संस्कारित बचपन ही आदर्श समाज का निर्माण करने में सक्षम है। अगर उनके भीतर शिक्षा के साथ-साथ समुचित संस्कार भी हों तो निश्चित ही वे देश को नए आयाम प्रदान करेंगे। उनकी सेवाएं उद्देश्यपरक होंगी। दया, क्षमा, मानवता, परिश्रम और धैर्य जैसे दैवीय गुण उनके भीतर होने अत्यंत आवश्यक हैं। यही गुण उनको परिपक्व मानव बनाते हैं। बच्चों में संस्कार उन्हें उनके परिवार से मिलते हैं। माता-पिता के संस्कार ही बच्चों का मार्ग प्रशस्त करते हैं। वह जैसा परिवार में देखते हैं, वही अपनाने लगते हैं। इसीलिए परिवार का माहौल बच्चों के संस्कारों के लिए बड़ा महत्व रखता है। अनेक प्रवृत्तियां वे अपने अभिभावकों से ही सीखते हैं।

प्रेरक कहानियों के माध्यम से भी बच्चों के भीतर संस्कार गढ़े जा सकते हैं। नैतिक शिक्षा बच्चों को आंतरिक ऊर्जा देती है। यह एक तरह से उनके लिए टानिक का काम करती है। बाल्यकाल में सुनी कहानियां आजीवन प्रभाव डालती हैं। माता जीजाबाई बाल्यकाल से ही शिवाजी को वीर योद्धाओं की कहानियां सुनाया करती थीं, जिससे उनके भीतर दृढ़ता, पराक्रम एवं राष्ट्रभक्ति के पुष्प पल्लवित होने लगे। आगे चलकर उन्होंने मातृभूमि की रक्षा के लिए अनेक युद्ध लड़े। भक्त प्रह्लाद ने देवर्षि नारद से भगवान श्री विष्णु की लीलाओं की कहानियां सुनीं, जिनसे प्रभावित होकर वह भगवान विष्णु के भक्त हो गए। आधुनिक समय में बच्चों के समक्ष विचलित होने के लिए अनेक माध्यम हैं। उन्हें किसी भी प्रकार के विचलन से बचाने के लिए उन्हें श्रेष्ठ बाल साहित्य का सामीप्य प्रदान कराना होगा, जिससे उनके सद्संस्कारों की जड़ों को गहरे तक सींचा जा सके। यदि हम नई पीढ़ी में संस्कार के बीज रोपित कर सकें, तभी अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को अक्षुण्ण रख पाएंगे।

ललित शौर्य

मासिक धर्म पर अपमानित न हों बेटियां

सुनीता मिश्रा

छात्राओं को मासिक धर्म के बारे में उचित शिक्षा देने के बजाय स्कूल द्वारा उन पर मानसिक दबाव बनाना शर्मनाक कृत्य है

महाराष्ट्र के ठाणे जिले के एक निजी स्कूल के शौचालय में खून के धब्बे मिलने के बाद पीरियड्स की जांच के नाम पर छात्राओं (पांचवीं कक्षा से दसवीं तक) के न केवल कपड़े उतरवाए गए, बल्कि उनके फिंगरप्रिंट लिए गए और दीवार पर लगे धब्बों की तस्वीरें प्रोजेक्टर पर दिखाई गईं। अभिभावकों के विरोध के बाद स्कूल के प्रिंसिपल को बर्खास्त कर दिया गया है और मामले की विस्तृत जांच के आदेश दिए गए हैं। पुलिस ने इस संबंध में प्रिंसिपल, एक महिला सहायक समेत पांच लोगों को गिरफ्तार किया है। इस अमानवीय कृत्य से न केवल छात्राओं को मानसिक आघात पहुंचा, बल्कि पूरा देश शर्मसार हुआ है।

अल्पायु में मन को लगी ठेस ताउम्र शारीरिक और मानसिक रूप से पीड़ा देने वाली होती है। अभिभावक अपने बाद स्कूल को बच्चों के लिए सबसे सुरक्षित स्थान मानते हैं। शिक्षकों से बच्चों के प्रति संवेदनशील व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। छात्राओं को मासिक धर्म की प्राकृतिक प्रक्रिया के बारे में उचित शिक्षा देने के बजाय स्कूल द्वारा उन पर मानसिक दबाव बनाना शर्मनाक और घृणित कृत्य है। इस मामले में स्कूल प्रशासन को समझदारी से कदम उठाना चाहिए था। शौचालय में खून के धब्बे मिलने के बाद सबसे पहले उसे साफ करवाना चाहिए था, ताकि किसी बच्चे को इससे संक्रमण न हो सके।

अफसोस की बात यह है कि मासिक धर्म के नाम पर छात्राओं को अपमानित करने के मामले रह-रहकर सामने आते रहते हैं। फरवरी 2020 में गुजरात के भुज से इस तरह का मामला सामने आया था, जब सहजानंद गर्ल्स कालेज के बाहर सैनिटरी पैड मिलने के बाद 68 लड़कियों के मासिक धर्म की जांच करने के लिए उनके कपड़े उतरवाए गए थे। इस वर्ष जनवरी में उत्तर प्रदेश के बरेली में परीक्षा के दौरान अचानक मासिक धर्म आने पर 11वीं की छात्रा को सैनिटरी पैड उपलब्ध कराने के बजाय उसे कक्षा से बाहर निकाल दिया गया। अप्रैल में तमिलनाडु के कोयंबटूर में आठवीं कक्षा में पढ़ने वाली एक दलित छात्रा को मासिक धर्म होने पर कक्षा से बाहर सीढ़ियों पर परीक्षा देने को मजबूर किया गया।

किसी को भी बेटियों के आत्मसम्मान के साथ खिलवाड़ करने का कोई हक नहीं है। सभ्य समाज में इसे बर्दाश्त नहीं किया जाना चाहिए। केंद्र सरकार ने भी स्कूलों में छात्राओं के बीच मासिक धर्म को लेकर जागरूकता फैलाने और उनके दृष्टिकोण एवं व्यवहार में बदलाव लाने के लिए मासिक धर्म स्वच्छता संबंधी राष्ट्रीय नीति तैयार की है। ऐसे में बेटियों का मनोबल बढ़ाते हुए उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करने की जरूरत है। वहीं इस तरह की घटनाओं पर विराम लगाने के लिए कड़े कदम उठाए जाने चाहिए। इसके लिए अतिशीघ्र कार्रवाई करते हुए दोषियों को कड़ी से कड़ी सजा दी जानी चाहिए।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

लोकतंत्र और सुरक्षा के लिए खतरा

'फर्जी वोटर' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय पढ़ा। इसमें फर्जी वोटरों को लेकर गंभीर चिंता प्रकट की गई है। निःसंदेह लोकतंत्र की सबसे बड़ी शक्ति मतदाता होता है, लेकिन जब मतदाता सूची में फर्जी नाम शामिल हो जाएं तो यह व्यवस्था की विश्वसनीयता और देश की आंतरिक सुरक्षा दोनों के लिए बड़ा खतरा बन जाता है। बिहार में जिस प्रकार नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार के नागरिकों के फर्जी तरीके से भारतीय दस्तावेज बनाकर वोटर बनने की खबरें सामने आई हैं, वह अत्यंत गंभीर और चिंताजनक हैं। इन अवैध नागरिकों ने आधार कार्ड, राशन कार्ड, ड्राइविंग लाइसेंस और अन्य प्रमाण पत्र हासिल कर स्वयं को भारतीय नागरिक प्रमाणित कर लिया है। इससे न केवल चुनावी प्रक्रिया प्रभावित होती है, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा को भी सीधा खतरा उत्पन्न होता है। यह समस्या केवल बिहार तक सीमित नहीं, बल्कि कई अन्य राज्यों में हो सकती है। अतः केंद्र सरकार को राष्ट्रीय स्तर पर इस दिशा में ठोस नीति बनानी चाहिए। घर-घर सर्वे कर प्रमाणिकता की जांच की जाए। सभी पहचान पत्रों को मतदाता सूची से लिंक किया जाए। नौकरशाही में जो अधिकारी इस गड़बड़ी में लिप्त हैं, उन पर सख्त कार्रवाई हो। सीमावर्ती क्षेत्रों में चौकसी और निगरानी और अधिक मजबूत की जाए। यदि समय रहते इस पर नियंत्रण नहीं हुआ तो यह देश के लोकतंत्र और आंतरिक सुरक्षा के लिए घातक सिद्ध होगा। इस दिशा में समय रहते हुए सभी आवश्यक कदम उठाने होंगे।

sureshgoyal8@gmail.com

मेलबाक्स

ग्लोबल कैंपस, लोकल सवाल

केवल भारत से ही लगभग 20 से 25 लाख छात्र विदेश में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इसके लिए वे विदेशी विश्वविद्यालयों को फीस के रूप में लगभग 8000 करोड़ रुपये का भुगतान कर रहे हैं। लंबे समय से प्रतीक्षित ये विदेशी विश्वविद्यालय अब भारत में आने के लिए तैयार हैं। आने वाले एक-दो वर्षों में लगभग 15 विदेशी विश्वविद्यालयों के शाखा परिसर गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली और हरियाणा में कार्यान्वित होने वाले हैं। भारत में विदेशी विश्वविद्यालयों का आना वास्तव में उन विदेशी संस्थानों की जरूरत है। उनके देशों में युवाओं की घटती जनसंख्या, सीमित होते सरकारी अनुदान और वार्षिक बजट में वित्तीय असंतुलन के कारण उन्हें अब विदेशी छात्रों के प्रवेश पर निर्भर रहना पड़ रहा है। विदेशी विश्वविद्यालयों के आगमन से समाज के संपन्न वर्ग को कुछ लाभ मिल सकते हैं। उच्च शिक्षा के लिए विदेश जाने, वहां की फीस, रहने और रोजमर्रा की जिंदगी के खर्च से अब बचत हो सकती है, लेकिन अगर ये विदेशी विश्वविद्यालय गुणवत्ता में समझौता करते हैं और शिक्षा को व्यवसाय की तरह चलाते हैं, तो भविष्य में डिग्रीधारी युवाओं के बजाय विदेशी डिग्रीधारी बेरोजगारों की संख्या बढ़ने का खतरा रहेगा। इसलिए जरूरी है कि भारतीय विश्वविद्यालयों को अधिक सशक्त बनाया जाए और शिक्षा पर खर्च को जीडीपी के छह प्रतिशत तक पहुंचाया जाए। गुणवत्तापूर्ण देसी शिक्षण संस्थानों का निर्माण करना अत्यंत आवश्यक है। लगभग 1100 विश्वविद्यालयों और 50,000 से अधिक महाविद्यालयों वाले भारत जैसे देश के लिए यह करना अब समय की मांग बन गई है।

दत्तप्रसाद शिरोडकर, मुंबई

एक खतरनाक सच्चाई

उत्तर प्रदेश में बड़े पैमाने पर युवतियों का मतांतरण करने वाले छांगुर बाबा और उसके गिरोह की गिरफ्तारी ने एक बार फिर देश में सक्रिय उन अपराधी नेटवर्कों की पोल खोल दी है, जो मजहबी आड़ में समाज को दीमक की तरह खोखला कर रहे हैं। वर्षों तक इनकी गतिविधियां बेधड़क क्यों चलती रहती हैं? इसका सीधा उत्तर है- राजनीतिक संरक्षण। जब तक किसी असामाजिक तत्व को किसी प्रभावशाली राजनीतिक हस्ती, स्थानीय प्रशासन या प्रभावशाली धार्मिक समूह का छुपा समर्थन न मिले, वह इस हद तक बेखौफ नहीं हो सकता। यह भी सच्चाई है कि भारत के कोने-कोने में इससे कहीं अधिक शातिर और संगठित गिरोह सक्रिय हैं, जो मजहबी उन्माद, लव जिहाद, अवैध तस्करी और मानव तस्करी में लिप्त हैं।

विनय कुमार, गाजियाबाद

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक- स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, चेयरमैन एमीरिट्स -महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक- संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****

हिन्दुस्तान 1936

समोसे की समस्या

समोसे, जलेबी और अन्य तले हुए व्यंजनों के उपभोग को कम करने की दिशा में किया जा रहा प्रयास सराहनीय है। जैसे सिगरेट के पैकेट पर स्वास्थ्य चेतावनी होती है, ठीक वैसी ही चेतावनी इन तैलीय और मीठे खाद्य पदार्थों के बारे में जारी होगी। बड़े पैमाने पर इस बात का प्रचार किया जाएगा कि तैलीय या जरूरत से ज्यादा मीठे खाद्य पदार्थों के उपभोग से दूर रहा जाए। ध्यान रहे, देश में मोटापा बढ़ रहा है और इसके खिलाफ जागरूकता भी बढ़ रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने फिट इंडिया अभियान के तहत तेल और चीनी का उपभोग कम करने का आह्वान किया था। यह भी कहा था कि लोग अपने भोजन में तेल को कम करके विकसित भारत बनाने में सहायक हो सकते हैं। विशेष रूप से अत्यधिक तेल और अत्यधिक मिठास के खिलाफ आकाशवाणी पर निरंतर प्रचार पिछले महीनों से चल रहा है। इसी कड़ी में समोसे, जलेबी और स्वास्थ्य के लिए घातक व्यंजनों को अगर आधिकारिक रूप से निशाने पर लिया गया है, तो अचरज की बात नहीं।

केंद्रीय स्वास्थ्य संस्थानों को कैफेटेरिया और सार्वजनिक स्थानों पर साफ तौर पर 'तेल और चीनी बोर्ड' लगाने का निर्देश दिया गया है। ये सूचनात्मक पोस्टर खासे लोकप्रिय खाद्य पदार्थों में वसा और चीनी की मात्रा को उजागर करेंगे। तले हुए और चीनी से भरपूर खाद्य पदार्थों को हतोत्साहित करने का समय आ गया है। इसकी शुरुआत अस्पतालों में चल रहे लापरवाह रेस्तरां से होनी चाहिए। तमाम रेस्तरां और मिष्ठान भंडारों पर इस चेतावनी को लटकाना आवश्यक है। ऐसा नहीं है कि लोग समोसा या जलेबी खाना छोड़ देंगे, पर उनमें सजगता आएगी। लोग तेल और चीनी के प्रयोग को कम करने के लिए प्रेरित होंगे। बेशक, देश में जीवनशैली से जुड़ी बीमारियां बढ़ रही हैं। स्वास्थ्य विशेषज्ञ चीनी और ट्रांस वसा को मोटापा, मधुमेह, उच्च रक्तचाप और हृदय रोग के मुख्य कारणों में गिनते हैं। एक चिंताजनक अनुमान यह भी है कि साल 2050 तक 44.9 करोड़ से ज्यादा भारतीय मोटापे से ग्रस्त हो जाएंगे, जिससे अपना देश दुनिया में मोटापे का दूसरा सबसे बड़ा केंद्र बन जाएगा। अतः बचाव के उपाय जरूरी हैं। पिछले दिनों, हर व्यक्ति से अपने भोजन में तेल की खपत को दस प्रतिशत तक कम करने की अपील की गई है। कुछ लोग अवश्य सुधार की ओर बढ़े होंगे और अब जब समोसे, जलेबी जैसे खाद्य पदार्थों पर चेतावनी रहेगी, तो खानपान में सुधार की गति को और बल मिलेगा।

पैसा कमाने के चक्कर में देश के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करने वालों को खुला नहीं छोड़ना चाहिए। हमें सोचना पड़ेगा कि केवल चेतावनी से पूरा सुधार नहीं आएगा।

फिट इंडिया अभियान में ज्यादा ईमानदारी की जरूरत है और साथ ही, शुद्ध भोजन के लिए जिम्मेदार सरकारी महकमों को ज्यादा सचेत होना पड़ेगा। आज अनेक प्रकार के विदेशी व्यंजन भी बाजारों में उपलब्ध हैं, इनमें से ज्यादातर व्यंजनों में मैदा, तेल, कृत्रिम रंग और रसायन का खतरनाक उपयोग हो रहा है। ऐसा कतई नहीं लगना चाहिए कि केवल भारतीय व्यंजनों को निशाना बनाया जा रहा है। दूसरी अहम बात, खाने और बनाने वालों, दोनों को जागना होगा। अनेक हलवाइयों की दुकानों पर एक ही तेल का बार-बार प्रयोग, खराब या गलत सामग्रियों का इस्तेमाल तत्काल रुकना चाहिए। पैसा कमाने के चक्कर में देश के स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करने वालों को खुला नहीं छोड़ना चाहिए। जब दूध और पनीर की गारंटी न हो, तब हमें सोचना पड़ेगा कि केवल चेतावनी से सुधार नहीं आने वाला। गुणवत्ता सुनिश्चित करने वाले महकमों और अधिकारियों को युद्ध स्तर पर सक्रिय होना पड़ेगा, तभी हम फिट इंडिया के ख्वाब को साकार कर पाएंगे।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 15 जुलाई, 1950

संरक्षण की शर्त

भारतीय उद्योगों को संरक्षण की बात नई नहीं है। विदेशी राज्य के समय विदेशी उद्योगों के मुकाबले टिके रहने के लिए संरक्षण का प्रारम्भ किया गया था, जिसमें खास बात तटकरों की थी। विदेशों से आनेवाले माल की प्रतियोगिता में संरक्षित उद्योग का माल टिक सके, इसके लिए विदेशी माल पर इस हिसाब से तटकर लगाया जाता था कि वह भारतीय माल से सस्ता न पड़े। स्वतन्त्रता के बाद चूंकि स्थिति और दृष्टि बदल गई है, संरक्षण के बारे में भी नये सिरे से विचार और नीति-निर्धारण आवश्यक था। सन् 1948 में भारत-सरकार ने अपनी जो औद्योगिक नीति घोषित की, उसमें अन्य बातों के साथ यह भी कहा- 'तटकर नीति इस प्रकार रक्खी जायगी, जिससे अनुचित प्रतिस्पर्धा को रोका जा सके और भारत के साधनों के उपयोग को इस तरह बढ़ाया जाय, जिससे उपभोक्ताओं पर अनुपयुक्त भार न पड़े।' इसी को दृष्टि में रखकर अप्रैल 1949 में सरकार ने आर्थिक (फिजफल) आयोग श्री बी. टी. कृष्णमाचार्य की अध्यक्षता में नियुक्त किया, जिसकी रिपोर्ट अब सामने आई है।

सवा साल के परिश्रम और लगभग पौने चार लाख के व्यय के फलस्वरूप आर्थिक आयोग ने जो विवेचन किया है और जो निष्कर्ष उपस्थित किये हैं, वे गंभीर विचार की अपेक्षा रखते हैं। प्रथम तो यह विषय ही पेचीदा है और दूसरे इसका विवेचन शास्त्रीय ढंग से ही किया जा सकता है, अतः सर्वसामान्य को यह गोरखधन्धा लगे तो आश्चर्य नहीं। फिर भी आयोग की रिपोर्ट का जो सार सामने आया है तथा आयोग के अध्यक्ष श्री कृष्णमाचार्य ने पत्रप्रतिनिधि सम्मेलन में उसपर जो प्रकाश डाला है, उससे यह स्पष्ट है कि 'फिजकल' (आर्थिक) शब्द को सीमित रूप में ही नहीं रक्खा गया है, बल्कि पहले जहां इसका अर्थ उद्योग-व्यापार को संरक्षण देने से ही था, वहां कृष्णमाचार्य-आयोग ने इसे आयोजना का ही पर्यायवाची-सा बना दिया है। उसने संरक्षण से संबंधित सभी प्रश्नों पर विचार किया है, क्योंकि उसके अनुसार उद्योगों का संरक्षण आर्थिक उन्नति की सर्वांगीण योजना से सम्बद्ध होना चाहिए। इसी दृष्टि से उसने आबादी की समस्या का भी विचार किया है और संरक्षण का आधार ऐसी योजना पर रक्खा है, जिससे हमारे देश की बेरोजगारी दूर हो। यह उद्देश्य निस्सन्देह आकर्षक और सराहनीय है।

हिंदी को हद में बांधना मुमकिन नहीं

बाजार हिंदी को मुंबई, चेन्नई और बेंगलुरु में भी पहुंचाने में सहायक हो रहा है। अब यह दायित्व हिंदी समाज का है कि वह अपनी भाषा को सिर्फ बाजारू न बनने दे।

राय की राय | यहां स्कैन करें

विभूति नारायण राय | पूर्व कुलपति व साहित्यकार

हिंदी को लेकर जब महाराष्ट्र में मुखालफत के स्वर उठे, तो यह फैसला कर पाना थोड़ा मुश्किल था कि इस पर हंसा जाए या रोया? कारण स्पष्ट है। महाराष्ट्र उन इलाकों में से एक है, जिसमें आजादी के पहले हिंदी के पक्ष में सबसे जोरदार आवाजें उठी थीं।

एक दौर में, जब महाराष्ट्र और गुजरात, दोनों बॉम्बे प्रेसीडेंसी के भाग थे, हिंदी के पक्ष में सबसे मजबूत आंदोलन वहीं से शुरू हुआ था। इसी प्रेसीडेंसी में महात्मा गांधी ने पहले पहल हिंदी के लिए राष्ट्रभाषा शब्द का प्रयोग किया था। उन्होंने 1936 में वर्धा में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना की और उसके पहले वह दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना कर चुके थे। मराठीभाषी मामा वरेरकर, काका कालेलकर या जयंत विष्णु नार्लीकर जैसे विद्वानों ने अपना पूरा जीवन ही हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगा दिया था। जिन लोगों को गांधीजी ने हिंदी प्रचारकों के रूप में भारत के सुदूर अंचलों में भेजा था, वे केवल हिंदी के अध्यापक नहीं थे, वे स्वतंत्रता की अलख जगाने वाले कार्यकर्ताओं की तरह थे, जो हिंदी के प्रचार-प्रसार के साथ कांग्रेस के दूसरे कार्यक्रमों, यथा हरिजनोद्धार या खादी के लिए चरखा कातने जैसों के लिए भी काम करते थे।

यह एक दिलचस्प अध्ययन का विषय हो सकता है कि महाराष्ट्र में क्योंकर एक राजनीतिक धड़े की तरफ से हिंदी के खिलाफ ऐसा माहौल बनाया गया कि वहां की सरकार को त्रिभाषा फॉर्मूले में हिंदी की अनिवार्य उपस्थिति वाले आदेश को वापस लेना पड़ा। जिन राजनीतिक शक्तियों द्वारा मराठी और हिंदी के बीच संघर्ष पैदा करने की कोशिश की गई, वे पिछले कई वर्षों से चुनावी वनवास की स्थिति में हैं। ऐसे में, भाषा के नाम पर उन्हें एक ऐसा अवसर मिला, जिस पर मराठी मानुष की भावनाओं को भड़काकर उन्हें आंदोलित किया जा सकता था और उन्होंने किया भी वही।

हिंदी के खिलाफ हालिया आंदोलन जिस शिकायत को लेकर शुरू हुआ, वह किस कदर झूठ पर आधारित है, इसे समझने के लिए किसी को दिमाग पर जोर डालने की जरूरत नहीं पड़ेगी। सरकार ने पांच वर्ष पूर्व नई शिक्षा नीति की घोषणा की थी। इसके पक्ष या विपक्ष में नाना तर्क दिए जा सकते हैं, पर इसमें भाषा से जुड़े दो महत्वपूर्ण बिंदु थे, जिन पर शिक्षाविदों में आम तौर से सहमति थी। इसने प्राइमरी शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से देने की बात कही और माध्यमिक शिक्षा के दौरान हर छात्र के लिए अपनी मातृभाषा के अलावा एक विदेशी और एक भारतीय भाषा पढ़ना अनिवार्य कर दिया। यह भारतीय भाषा जरूरी नहीं है कि हिंदी ही हो, मसलन तामिलनाडु में यह कन्नड़ या तेलुगु हो सकती थी।

किसी ठोस कार्यक्रम की अनुपस्थिति में तमिलनाडु के राजनेताओं के लिए बहुत आसान था कि वे जनता के बीच यह शोर मचाते हुए जाएं कि उनके बच्चों पर हिंदी जबरदस्ती थोपी जा रही है और जैसा कि ऐसे मामलों में होता है, किसी ने पूरा दस्तावेज पढ़ने की जहमत नहीं की और हिंदी विरोधी पुरानी तमिल राजनीति एक बार फिर से भड़क उठी। किसी ने उनसे यह नहीं कहा कि तमिल बच्चों को हिंदी नहीं पढ़ाना चाहते हैं, तो मत पढ़ाएं, उसकी जगह दूसरी भारतीय भाषा पढ़ाएं। यदि उन्हें कई भारतीय भाषाओं के साथ हिंदी का भी विकल्प दिया जाएगा, तो सभी जानते हैं कि वे हिंदी ही पढ़ेंगे। महाराष्ट्र ने जरूर एक रणनीतिक भूल कर दी, उसने तीसरी भाषा के रूप में हिंदी अनिवार्य कर दी और इससे हाशिये पर धकेल दिए गए कुछ राजनीतिज्ञों को हिंदी बनाम मराठी विवाद खड़ा करने का मौका मिल गया। वहां अब हिंदी को अनिवार्य के स्थान पर ऐच्छिक कर दिया गया है और भविष्य बताएगा कि छात्र स्वयं ही उसे चुन रहे हैं।

इस बार के भाषा आंदोलन की एक खास बात है, जिसे रेखांकित किया जाना चाहिए और वह है हिंदी प्रेमियों की संतुलित प्रतिक्रिया। हमें 1965 की उनकी प्रतिक्रिया को याद करना चाहिए, जब सांविधानिक व्यवस्था के तहत हिंदी संघ के कामकाज की भाषा बनने वाली थी। तत्कालीन मद्रास प्रांत में इसका विरोध हुआ, तो उसकी प्रतिक्रिया में हिंदी क्षेत्रों में भी उसके पक्ष में उग्र प्रतिक्रियाएं आनी शुरू हो गईं। एक-दूसरे की प्रतस्पिर्द्धा में विरोध इतना हिंसक रूप धारण कर गया कि आज के तमिलनाडु के कई इलाकों में जन-धन की भारी क्षति हुई, फलस्वरूप केंद्र सरकार को हिंदी के साथ अंग्रेजी को भी संघ के कामकाज की भाषा बनाए रखने के लिए तैयार होना पड़ा।

इस बार हिंदी प्रदेशों में गंभीर प्रतिक्रिया न होने के पीछे दो कारण हैं- पहला तो यह कि अब हिंदीप्रेमियों ने मान लिया है कि हिंदी देश की राष्ट्रभाषा नहीं है और संविधान ने उसे राजभाषा का ही दर्जा दिया है। राष्ट्रभाषा बनने में कई ऐसी बाधाएं हैं, जिनसे फिलहाल तो पार पाना संभव नहीं लगता। दूसरा, इसके मुकाबले वह आसानी से एक बहुभाषी देश की संपर्क भाषा बन सकती है और बाजार ने पिछले कुछ वर्षों में उसे यह दर्जा दिला भी दिया है। एक उड़िया नगालैंड में हिंदी बोलकर काम चलाता है और केरल में काम की तलाश में गए बंगाली मजदूर हिंदी को एक संपर्क भाषा के तौर पर इस्तेमाल करते हैं। रोजगार के लिए बड़े पैमाने पर एक भाषिक क्षेत्र से दूसरे में प्रवसन हो रहा है और बिना किसी सरकारी प्रयास के हिंदी एक संपर्क भाषा की तरह स्वीकृत हो रही है।

कुछ वर्षों पूर्व जब मैं हिंदी विश्वविद्यालय का कुलपति था, तब मैंने देखा कि हिंदी सीखने आने वाले विदेशी छात्रों में सबसे अधिक चीनी थे। मुझे यह जानने की उत्सुकता हुई कि बहुत अच्छे संबंध न होने के बावजूद चीनी हिंदी में क्यों रुचि दिखा रहे हैं और बहुत लंबी बातचीत के बिना भी समझ में आ गया कि भारतीय बाजार उन्हें आकर्षित कर रहा है। भारत का मध्यवर्ग यूरोप की पूरी आबादी से भी बड़ा था और यह दूसरी श्रेणी के शहरों तक फैल गया था। इस बड़े बाजार तक पहुंचने में चीनी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को हिंदी ही मदद कर सकती है। यही बाजार हिंदी को मुंबई, चेन्नई और बेंगलुरु जैसे महानगरों में भी पहुंचाने में सहायक हो रहा है। अब यह दायित्व हिंदी समाज का है कि वे अपनी भाषा को सिर्फ बाजारू न बनने दें और उसके प्रति एक रागात्मक संबंध विकसित करें और उसमें उपलब्ध प्रभूत साहित्य और रचनाकारों के प्रति अपने दिल में सम्मान पैदा करें।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अधूरे खुलासे से कैसे जानेंगे विमान हादसे का पूरा सच

यहां स्कैन करें

अमित सिंह | फेलो, रॉयल एयरोनॉटिकल सोसाइटी

अहमदाबाद में हुए एअर इंडिया विमान हादसे की शुरुआती जांच-रिपोर्ट नए सिरे से भ्रम और संदेह पैदा कर रही है। 15 पन्नों का यह दस्तावेज, जिससे इस हादसे के कारणों के स्पष्ट होने की उम्मीद बांधी गई थी, कई अनसुलझे सवालों और अधूरे खुलासों का पिटारा बनता दिख रहा है। एअर इंडिया का बोइंग विमान 12 जून को अहमदाबाद में रनवे से ऊपर उठा और आधे मिनट के भीतर ही पास के कॉलेज हॉस्टल पर गिर गया, जिसके कारण 260 से अधिक लोगों की जान चली गई। रिपोर्ट के मुताबिक, विमान करीब 1.38 बजे 180 नॉट्स की गति तक पहुंच गया था, लेकिन अगले कुछ ही क्षणों में महज एक सेकंड के भीतर इसके दोनों इंजनों को ईंधन की आपूर्ति करने वाले स्विच 'रन' से 'कटऑफ' हो गए। अगले दस सेकंड में क्रू के सदस्यों ने इंजन को फिर से शुरू करने का प्रयास किया। मगर तब तक बहुत देर हो चुकी थी और विमान लपटों के हवाले था।

अंतरराष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन का अनुलग्नक 13 कहता है कि शुरुआती रिपोर्ट का मकसद दोषारोपण करना नहीं होता, बल्कि घटनाओं को तथ्यात्मक रूप से क्रमवार बताना, महत्वपूर्ण सुरक्षा चिंताओं को सामने लाना और जरूरत पड़ने पर सुधार की सिफारिशें करना होता है। इसका उद्देश्य अन्य देशों और संबंधित पक्षों को शुरुआती तथ्य बताना होता है, ताकि समय पर वे जरूरी सुधार कर सकें। एआई171 विमान की शुरुआती रिपोर्ट अनुलग्नक 13 का पालन तो करती है, लेकिन ऐसा करते हुए कुछ महत्वपूर्ण सूचनाओं को नजरंदाज कर देती है, जो सबके सामने आनी चाहिए थी।

प्राथमिक रिपोर्ट में कोई सुरक्षा सुझाव भी नहीं दिए गए हैं, जबकि अतीत की ऐसी घटनाओं के बाद सेवा बुलेटिन व सुरक्षा सूचना बुलेटिन जारी किए गए थे।

इस रिपोर्ट में फ्लाइट डाटा रिकॉर्डर (एफडीआर) डाटा का अभाव है। रिपोर्ट ने ईंधन नियंत्रित करने वाले स्विच के बंद होने की बात कही है, जिसका अर्थ है कि यह डाटा उपलब्ध है और इसका विश्लेषण किया गया है। फिर भी, रिपोर्ट में न तो इसके आंकड़े बताए गए हैं और न ही इस बात की पुष्टि की गई है कि एफडीआर डाटा शत-प्रतिशत हासिल कर लिया गया है। इसी तरह, कॉकपिट वॉयर रिकॉर्डर (सीवीआर) का केवल एक बार जिक्र किया गया है। इसमें न तो बातचीत का विवरण है और न ही इसकी कोई स्पष्ट समय-रेखा बताई गई है। चालक दल की जागरूकता या उनकी मनःस्थिति के बारे में भी कोई जानकारी नहीं दी गई है। जबकि, दुनिया भर में बड़ी दुर्घटनाओं के बाद जारी इन शुरुआती रिपोर्टों में एफडीआर और सीवीआर के पूरे आंकड़े, चेतावनी संदेश, पायलट एक्शन आदि बताए जाते हैं।

इस रिपोर्ट में रैम एयर टर्बाइन के बारे में भी बताया गया है, जो छोटा आपातकालीन टर्बाइन होता है और उड़ान भरने के तुरंत बाद इंजन में आई खराबी या उसके फेल हो जाने पर विमान की प्रमुख प्रणालियों को नियंत्रित करता है। रिपोर्ट में इससे अलग कुछ सिस्टम के अलर्ट होने की बात कही गई है, लेकिन यह नहीं बताया गया है कि ये अलर्ट क्यों हुए? क्या वे इसकी वजह से हुए या कोई अन्य कारण से? एक जरूरी सवाल यह भी है कि क्या 'इंजन इंडिकेटिंग ऐंड क्रू अलर्टिंग सिस्टम' (ईआईसीएएस) ने किसी भी समय इंजन के फेल होने या इसी तरह की कोई चेतावनी दी थी? ईंधन वाले स्विच 'कटऑफ' कैसे हो गए? क्या यह पायलट की गलती थी या यह अनजाने में स्विच को छू जाने से हुआ या फिर सिस्टम में कोई खराबी थी? सवाल यह भी है कि क्या पायलटों ने किसी संकेत का गलत अर्थ निकाला या अचानक इंजन पूरी तरह फेल हो गए? इमरजेंसी लोकेटर ट्रांसमीटर (ईएलटी) एक्टिव क्यों नहीं हुआ? क्रैश-प्रूफ रिकॉर्डर (ईएफआर) क्यों क्षतिग्रस्त हो गए?

इतना ही नहीं, रिपोर्ट में कोई सुरक्षा सुझाव भी नहीं दिए गए हैं, जबकि बोइंग ने अतीत में ऐसी घटनाओं के बाद सेवा बुलेटिन और सुरक्षा सूचना बुलेटिन तुरंत जारी किए थे। जाहिर है, मारे गए 260 लोगों के परिवारों के लिए, यह रिपोर्ट जांच का कोई आश्वासन नहीं देती। वह यह भी नहीं बताती कि इसी तरह के अन्य विमान सुरक्षित हैं या किस तरह के संभावित सुरक्षात्मक उपाय किए जाएंगे? साफ है, जिस पारदर्शिता को विमानन सुरक्षा में विश्वास का आधार माना जाता है, उसे बनाए रखने में यह रिपोर्ट विफल साबित हो रही है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

प्रेम में आदर जरूरी

जब हम कहते हैं कि हम किसी से प्रेम करते हैं, तो हमारा क्या तात्पर्य होता है? हमारा तात्पर्य होता है कि उस व्यक्ति पर हमारा अधिकार है। उस अधिकार से ईर्ष्या पैदा होती है, क्योंकि अगर मैं उसे खो दूं, तो क्या होगा? मैं अपने आप को खाली-खाली, लुटा हुआ अनुभव करूंगा; इसीलिए मैं उस अधिकार को वैधानिक बना लेता हूं, मैं उस स्त्री या पुरुष पर अपनी पकड़ बनाए रखता हूं। इस प्रकार, उस व्यक्ति पर पकड़ और कब्जा बनाए रखने का सिलसिला ईर्ष्या लाता है, भय लाता है तथा कई तरह के द्वंद्व पैदा करता है। निस्संदेह, ऐसा कब्जा प्रेम नहीं है।

भावुक होना प्रेम नहीं है, क्योंकि भावावेश और भावुकता संवेदन मात्र हैं। कृष्ण के लिए, ईसा के लिए, अपने गुरु के लिए या किसी अन्य के लिए रोने वाला धार्मिक व्यक्ति बस भावुक होता है, भावनाओं में डूबा होता है। वह संवेदन में, उत्तेजना में लिप्त होता है, जो विचार की प्रक्रिया है और विचार प्रेम नहीं है। विचार संवेदन का परिणाम है, अतः भावुक व्यक्ति संभवतः प्रेम को नहीं जान सकता, क्योंकि जब भावाविष्ट व्यक्ति को अपनी भावनाओं का प्रत्युत्तर नहीं मिलता, तो वह क्रूर हो सकता है। उसे आसानी से उकसाया जा सकता है।

प्रेम को आप तभी जान पाएंगे, जब सब कुछ विदा हो चुका हो, समाप्त हो चुका हो, जब अधिकार जमाने का भाव न रहे, जब किसी विषय के प्रति भक्ति-भाव में आप बहे न जा रहे हों। ऐसा भक्ति-भाव तो याचना ही है, किसी अन्य रूप में कामना-पूर्ति की तलाश। जो प्रार्थना कर रहा है, उसे प्रेम नहीं मालूम। चूंकि आप में अधिकार भाव है; चूंकि आप ऐसी भक्ति द्वारा, जो आपको भावुक और श्रद्धालु बना देती है, किसी लक्ष्य या परिणाम की खोज कर रहे हैं, तो भला वहां प्रेम कैसे हो सकता है? जब आदर नहीं होता, तब जाहिर है, प्रेम भी नहीं होता। आप कहते हैं, आप तो आदर करते हैं, लेकिन आपका यह आदर केवल ऊंचे लोगों के लिए है; ऐसा आदर तो कुछ पाने की तमन्ना या किसी डर की वजह से है। यदि आप वास्तव में सम्मान करते हैं, तो आप निम्नतम का भी उतना ही सम्मान करेंगे, जितना तथाकथित उच्चतम का। आपके अंदर यह भाव नहीं है, इसलिए प्रेम भी नहीं है।

भावुक व्यक्ति संभवतः प्रेम को नहीं जान सकता, क्योंकि जब किसी भावाविष्ट व्यक्ति को अपनी भावनाओं का प्रत्युत्तर नहीं मिलता, तो वह क्रूर हो सकता है। उसे आसानी से उकसाया जा सकता है।

हममें से कितने कम लोग उदार, क्षमाशील और करुणापूर्ण होते हैं! जब आपको उदारता से कोई लाभ होता है, तब आप उदार होते हैं, जब आपको करुणा से कुछ मिलने वाला होता है, तब आप करुण हो जाते हैं। मगर जब ये सारी विसंगतियां समाप्त हो जाती हैं, जब ये सब बातें आपके मन को नहीं घेरे रहतीं और आपका हृदय मन के विषयों से नहीं भरा होता, तब प्रेम होता है; और सिर्फ प्रेम ही इस दुनिया के खब्त और पागलपन भरे मौजूदा हालात में बुनियादी बदलाव ला सकता है।

जे कृष्णमूर्ति

आशुतोष राणा | अभिनेता

जो सुना है, उसे यथोचित समझना श्रवण है; भ्रमण का मतलब ऐसे घूमना है, जो हमारे भ्रम को दूर कर सके। श्रावण में महादेव शिव चराचर जगत में विचरण करते हुए श्रद्धालुओं की प्रार्थनाओं को सुनते हैं, समझते हैं और उनके भ्रम का निवारण करते हैं।

मतदाता सूची में विदेशी घुसपैठ चिंताजनक

बिहार में मतदाता सूची के सत्यापन के दौरान चुनाव आयोग के प्रतिनिधियों को जो संकेत मिले हैं, वे न केवल चिंताजनक हैं, बल्कि भारत की चुनावी और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरे की घंटी भी हैं। खबरों के मुताबिक, बिहार में बड़ी संख्या में ऐसे लोग मतदाता बन गए थे, जो नेपाल, बांग्लादेश और म्यांमार से संबंधित हैं। इन विदेशी नागरिकों के पास आधार, राशन कार्ड जैसे भारतीय दस्तावेज भी हैं और वे भारतीय मतदाता के रूप में दर्ज हैं। यह केवल चुनावी हेरफेर नहीं, बल्कि राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा है, क्योंकि इससे घुसपैठ, फर्जी नागरिकता और सरकारी संसाधनों के अनुचित दोहन जैसे अनेक पहलू जुड़े हैं।

इस समस्या की जड़ में वोट बैंक की राजनीति हो सकती है। वर्षों से राजनीतिक दलों पर यह आरोप लगता रहा है कि वे विशेष वर्ग को खुश करने या अपना वोट बैंक मजबूत करने के लिए ऐसे घुसपैठियों को संरक्षण देते हैं। बांग्लादेशी और रोहिंग्या घुसपैठियों के भारत में बसने की समस्या कोई नई नहीं है। पश्चिम बंगाल, असम, त्रिपुरा जैसे राज्यों में यह संकट दशकों से चला आ रहा है और अब बिहार में भी इसके प्रमाण मिल रहे हैं। जब ये लोग आधार, राशन कार्ड, पैन जैसे दस्तावेज हासिल कर लेते हैं, तो फिर उनके लिए मतदाता सूची में शामिल होना आसान हो जाता है। यही नहीं, इनमें से अनेक लोग सरकारी योजनाओं का भी लाभ उठाते हैं, और नौकरी व शिक्षा में स्थान पाकर धीरे-धीरे 'भारतीय नागरिक' बन जाते हैं। जब चुनाव आयोग इस गंभीर स्थिति की ओर संकेत करता है और मतदाता सूची के देशव्यापी पुनरीक्षण का फैसला लेता है, तो यह एक आवश्यक और स्वागतयोग्य कदम होना चाहिए। मगर विडंबना है कि कुछ विपक्षी दल इस पर राजनीति करने लगते हैं। वे इसे सरकार द्वारा लोकतंत्र से छेड़छाड़ बताते हैं और चुनाव आयोग की निष्पक्षता पर सवाल उठाते हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जहां एक ओर फर्जी मतदाता हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था को खोखला कर रहे हैं, वहीं कुछ दल इन पर कार्रवाइयों के विरुद्ध खड़े नजर आते हैं। यह स्थिति तब और चिंताजनक हो जाती है, जब चुनाव आयोग के फैसलों पर बार-बार आपत्ति जताई जाती है।

जाहिर है, घुसपैठियों को चिह्नित करके उन्हें मतदाता सूची से हटाना ही पर्याप्त नहीं होगा, बल्कि उनके भारतीय दस्तावेजों को रद्द करना, उन्हें हिरासत में लेना और यदि आवश्यक हो, तो उन्हें अपने मूल देश में भेजने की व्यवस्था करना भी अनिवार्य होगा। यह एक सतत प्रक्रिया होनी चाहिए, जिसमें तमाम राज्यों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है।

मोनिका राज, शोधार्थी

अनुलोम-विलोम

मतदाता सूची पुनरीक्षण

पूर्वाग्रह के कारण हो रहे आरोप-प्रत्यारोप

बिहार में मतदाता सूची को लेकर जिस प्रकार की शंकाएं उछाली जा रही हैं, वे न केवल पूर्वाग्रहपूर्ण मानसिकता को दर्शाती हैं, बल्कि व्यापक सामाजिक-ऐतिहासिक संदर्भों से कटकर उपजे राजनीतिक विमर्श की संकीर्णता को भी उजागर करती हैं। इस पूरे विमर्श में यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जिस संवेदनशीलता और तथ्यपरकता की अपेक्षा थी, उसकी जगह भावनाओं, भय और अपुष्ट आंकड़ों ने ले ली है। यह समझना चाहिए कि प्रवासन और नागरिकता का प्रश्न भारत जैसे बहुलतावादी राष्ट्र में कोई नई बात नहीं है। सीमावर्ती राज्यों में बांग्लादेश, नेपाल या म्यांमार से ऐतिहासिक रूप से आवाजाही होती रही है। यह आवाजाही केवल अवैध प्रवास की शक्ल में नहीं, सांस्कृतिक, धार्मिक, व्यावसायिक और पारिवारिक संबंधों के तहत भी हुई है। पूर्वोत्तर भारत की अनेक जनजातियां म्यांमार और बांग्लादेश की सीमा के आर-पार सदियों से आती-जाती रही हैं। क्या इनको नकारकर हम लोकतंत्र की जड़ों को ही नहीं काट देंगे? यह कहना कि लाखों विदेशी नागरिक मतदाता सूची में शामिल हो गए हैं, अतिशयोक्ति है, जो न सिर्फ तथ्यात्मक प्रमाण से रहित है, बल्कि वर्ग विशेष के प्रति पूर्वाग्रह से प्रेरित भी है।

यह सोचना भी अपने-आप में भ्रामक है कि केवल आधार, राशन कार्ड या अन्य पहचान-पत्र के बल पर कोई भारत का मतदाता बन जाता है। मतदाता पंजीकरण एक विस्तृत सत्यापन प्रक्रिया के अधीन होता है, जिसमें स्थानीय प्राधिकारी, बूथ-स्तर के अधिकारी और चुनाव आयोग की अनेक स्तरीय जांच शामिल होती है। यदि इस प्रक्रिया में कोई चूक हुई हो, तो यह एक प्रशासनिक त्रुटि है। उसे राजनीतिक संदेह का रंग देना जन-विश्वास को ठेस पहुंचाने जैसा है। अगर इसमें दोष है भी, तो घुसपैठियों को रोकने की जिम्मेदारी सरकारों की है। मगर अभी इसके लिए बिहार में विपक्ष को जिम्मेदार ठहराया जा रहा है, जिसकी इस राज्य में 20 वर्षों से सरकार भी नहीं है।

यह भी विचारणीय है कि मतदाता सूची में सुधार के नाम पर जो अभियान चलाया जा रहा है, वह कई बार विपक्ष की सहभागिता और सुझावों के बिना एकतरफा ढंग से क्रियान्वित होता नजर आता है। इससे यह आशंका जन्म लेती है कि कहीं यह अभियान कुछ विशेष समूहों को लक्षित कर उन्हें वोट से वंचित करने का जरिया तो नहीं बन रहा? लोकतंत्र में जब भागीदारी के अधिकार को संशय की दृष्टि से देखा जाने लगे, तो वहां संविधान की आत्मा को पुनः पढ़ने की आवश्यकता होती है। साफ है, बिहार से भी कुछ ऐसे ही संदेश मिल रहे हैं।

नृपेंद्र अभिषेक नृप, टिप्पणीकार

बिज़नेस स्टैंडर्ड

वर्ष 18 अंक 127

आईबीसी में सुधार जरूरी

जैसा कि इस समाचार पत्र में भी प्रकाशित हुआ था, वित्तीय मामलों की संसद की स्थायी समिति ने गत सप्ताह एक बैठक में ऋण शोधन अक्षमता एवं दिवाला संहिता यानी आईबीसी के अधीन मामलों का समाधान तेज करने के लिए एक समर्पित राष्ट्रीय कंपनी विधि पंचाट (एनसीएलटी) और राष्ट्रीय कंपनी विधि अपील पंचाट (एनसीएलएटी) स्थापित करने की संभावना पर चर्चा की। अब जबकि उम्मीद है कि सरकार आगामी मॉनसून सत्र में इस संहिता में संशोधन प्रस्तुत करेगी, बेहतर होगा कि समिति अपने इस निर्णय को आगे ले जाए और उपयुक्त अनुशंसाएं करे। आईबीसी का क्रियान्वयन हाल के दशकों के सबसे महत्त्वपूर्ण सुधारों में से एक माना गया। भारत जैसी विशाल बाजार अर्थव्यवस्था के लिए यह महत्त्वपूर्ण है कि संहिता वांछित ढंग से काम करे और कंपनियों को बाहर निकलने का समयबद्ध और सहज रास्ता प्रदान करे। हालांकि, ऐसा नहीं हुआ। मोटे तौर पर यह इसलिए हुआ क्योंकि समाधान प्रक्रिया में देरी हुई। सर्वोच्च न्यायालय ने भूषण पावर और स्टील मामले में दिए गए अपने निर्णय में समाधान योजना को पलट दिया जिससे जटिलता और बढ़ गई है और इसका भी रास्ता निकालना होगा।

एनसीएलटी की स्थापना कंपनी विधि के प्रशासन के लिए की गई थी और अब इसके पास आईबीसी के मामलों पर फैसला करने की अतिरिक्त जिम्मेदारी है। लेकिन उसकी क्षमता में कोई खास इजाफा नहीं किया गया है। ऐसे में आईबीसी के मामलों में देरी से किसी को चकित नहीं होना चाहिए। हालांकि अब यानी आठ वर्ष के अनुभव के बाद सरकार को कमियों को दूर करना चाहिए। देरी को हल करने का एक तरीका तो यह है कि स्थायी समिति की चर्चा के मुताबिक एक समर्पित एनसीएलटी तथा एक अपील पंचाट की स्थापना की जाए। दूसरा और कहीं अधिक सीधा तरीका है कि एनसीएलटी और एनसीएएलटी की क्षमता में तत्काल इजाफा किया जाए। सरकार को प्रक्रिया में देरी की अन्य वजहों पर भी ध्यान देना चाहिए। आईबीसी का इरादा ऋण शोधन को जल्द से जल्द हल करने का है और इसके लिए अधिकतम 330 दिन की अवधि तय की गई है। यद्यपि भारतीय दिवाला एवं ऋण शोधन अक्षमता बोर्ड के नवीनतम तिमाही न्यूजलेटर से पता चलता है कि मार्च 2025 तक समाधान प्रस्तुत करने वाली 1,194 कॉरपोरेट ऋणशोधन प्रक्रियाओं में औसतन 597 दिन लगे। इसके अलावा परिसमापन यानी नकदीकृत होने वाली 2,758 ऐसी प्रक्रियाओं में औसतन 508 दिन लगे।

देरी को कम करने की आवश्यकता है लेकिन यह भी सही है कि आईबीसी ने देश की बैंकिंग व्यवस्था और ऋण संस्कृति पर सकारात्मक असर डाला है। मार्च 2025 तक कुल 8,308 मामले स्वीकृत हुए और 6,382 बंद हुए। लगभग जिन 1,200 मामलों में समाधान योजना पेश की गई उनमें कर्जदाताओं ने करीब 33 फीसदी स्वीकृत दावों की रिकवरी कर ली। यह मोटे तौर पर नकदीकृत मूल्य के 170 प्रतिशत के बराबर थी। ऋण संस्कृति पर प्रभाव की बात करें तो एनसीएलटी के आंकड़े दिखाते हैं कि दिसंबर 2024 के पहले 30,000 से अधिक मामले निपटाए जा चुके थे। इसके अलावा आईआईएम बेंगलूरु का एक अध्ययन दिखाता है कि आईबीसी ने कर्जदारों को ऋण के शिड्यूल पर टिके रहने का अभ्यस्त बनाया है। ऐसे में उन खातों की संख्या में कमी आई है जिनका भुगतान लंबित हो। ऋण संस्कृति में सुधार भी आईबीसी के लक्ष्यों में से एक था। प्रवर्तकों के सामने अब सही मायनों में कंपनियों का नियंत्रण गंवाने की आशंका है।

ऐसे में नतीजों को बेहतर बनाने के लिए ऋणशोधन के मामलों को समयबद्ध तरीके से स्वीकार किया जाना और हल किया जाना चाहिए। सरकार कारोबारी सुगमता बढ़ाने पर काम कर रही है और कंपनियों के लिए सहज तरीके से बाहर निकलना भी प्रक्रिया का एक हिस्सा है। ऐसे में इस क्षेत्र में कमजोरी को तत्काल दूर किया जाना चाहिए। इसके अलावा कानून में संशोधन करके प्रक्रिया को और अधिक सुनिश्चित बनाने की जरूरत है। अगर समाधान योजना को वर्षों बाद पलट दिया जाएगा तो इससे ऋणशोधन की प्रक्रिया की विश्वसनीयता प्रभावित होगी और संहिता की बुनियाद पर सवाल खड़े होंगे। इसे जारी नहीं रहने दिया जा सकता है।

कर्नाटक के तेज विकास में कहां रह गई चूक

सन 1991 के बाद कर्नाटक की तेज वृद्धि व्यापक मानव विकास के रूप में नजर नहीं आई है। अब वक्त आ गया है कि नीतियों में बदलाव किया जाए। बता रहे हैं एम गोविंद राव

कर्नाटक के हालात में पिछली चौथाई सदी में बहुत बदलाव आया है। 1990-91 में जहां उसकी प्रति व्यक्ति आय राष्ट्रीय औसत से 19 फीसदी कम थी वहीं अब वह जबरदस्त प्रगति करता हुआ देश के जीवंत प्रौद्योगिकी और नवाचार के केंद्र के रूप में उभरा है। यही नहीं वह आधुनिक सेवा उद्योग का केंद्र भी है। इस समय वह बड़े प्रदेशों में दूसरी सबसे ऊंची रैंकिंग वाला प्रदेश है और उसकी प्रति व्यक्ति आय 2022-23 में देश की औसत प्रति व्यक्ति आय से 80 फीसदी अधिक थी। यह जबरदस्त वृद्धि सेवा क्षेत्र की बदौलत आई है जो कुल मूल्यवर्धन में 68 फीसदी से अधिक योगदान करता है। यह सभी राज्यों में अधिक है। वास्तविक प्रति व्यक्ति आय 2011-12 से 2022-23 के बीच औसतन 6.4 फीसदी सालाना बढ़ी जो केवल गुजरात (6.8 फीसदी) से कम थी।

1991 के उदारीकरण ने विनिर्माण की तुलना में सेवा क्षेत्र में उद्यमिता को अधिक बढ़ावा दिया क्योंकि इसमें कम नियमन थे। राजधानी बेंगलूरु में इस नई मिली स्वतंत्रता का लाभ लेकर तकनीक और नवाचार के केंद्र में उभरने के लिए पारिस्थितिकी तंत्र पहले से मौजूद था। वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थानों तथा इन विषयों में कुशल कर्मियों के साथ नैसर्गिक परिवर्तन देखने को मिला। वर्ष 2023 तक देश के 112 यूनिकॉर्न में से 45 कर्नाटक में थे और कुल मूल्य में उनका योगदान 44.6 फीसदी था। वहां 875 से अधिक वैश्विक क्षमता केंद्र यानी जीसीसी थे। वर्ष 2025 में बेंगलूरु वैश्विक स्टार्टअप इकोसिस्टम सूचकांक में 7 स्थानों की छलांग लगाकर 14वें स्थान पर पहुंच गया। वह देश में विदेशी निवेश का सबसे बड़ा केंद्र है और सेवा निर्यात में अग्रणी भी। ऐसा इसलिए है क्योंकि उसकी ज्ञान अर्थव्यवस्था मजबूत है, वहां कुशल श्रमिक हैं, बेहतरीन सरकारी संस्थान हैं, अच्छा मौसम है, सांस्कृतिक विविधता है और मिश्रित आबादी के साथ सक्रिय अफसरशाही भी है। बड़े पैमाने पर कुशल श्रमिकों के आने से शहर एक जीवंत नगर में बदल गया और तकनीकी तथा वैज्ञानिक नवाचारों का केंद्र भी बन गया। हालांकि,राज्य की प्रभावी वृद्धि व्यापक मानव विकास में नजर नहीं आई और वहां व्यापक असमानता है। राज्य में होने वाला करीब 50 फीसदी मूल्यवर्धन राजधानी और पश्चिमी तट के दो जिलों दक्षिण कन्नड़ और उडुपी से आता है। राज्य औसत से कम वजन वाले बच्चों के मामले में 22वें स्थान पर, ठिगने बच्चों के मामले में 21वें स्थान पर, माध्यमिक स्तर पर स्कूल छोड़ने वाले बच्चों के मामले में 20वें स्थान पर और उच्च माध्यमिक नामांकन और 15 वर्ष से अधिक आयु वालों की साक्षरता के मामले में 17वें स्थान पर है।

उत्तर कर्नाटक का बड़ा हिस्सा आर्थिक और सामाजिक विकास के मामलों में पीछे है। इससे उन इलाकों में भेदभाव और अलग-थलग होने का एहसास उत्पन्न हुआ है। ऐसे में कर्नाटक विरोधाभासों का राज्य बन गया है। कुछ क्षेत्रों में जबरदस्त विकास हो रहा है तो वहीं अन्य इलाकों में पिछड़ापन और गरीबी है। अधोसंरचना में कमी को उत्तरी कर्नाटक के पिछड़ेपन की वजह बताया जा सकता है लेकिन सबसे अहम कारण क्षेत्र के इतिहास और संस्थानों द्वारा निर्धारित प्रोत्साहन और जवाबदेही के ढांचे में तलाश किए जाने चाहिए। 1956 में जब राज्यों का पुनर्गठन किया गया तो हैदराबाद के निजाम के क्षेत्र के कन्नड़ भाषी इलाकों और बॉम्बे प्रेसिडेंसी के ऐसे इलाकों का मैसूर के शाही घराने के जिलों के साथ विलय कर दिया गया। इसके अलावा मद्रास प्रेसिडेंसी के पश्चिमी तट में स्थित दक्षिण कन्नड़ जिले को इसमें शामिल किया गया। हैदराबाद कर्नाटक यानी कल्याण कर्नाटक और बॉम्बे कर्नाटक यानी किट्टूर कर्नाटक को भारी उपेक्षा झेलनी पड़ी।

उन इलाकों को न केवल सामाजिक और भौतिक अधोसंरचना की कमी का सामना करना पड़ा बल्कि वहां बंधुआ मजदूरी, बाल विवाह, महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव जैसे सामंती व्यवहार पहले से प्रचलित थे। जो क्षेत्र मैसूर शाही परिवार के शासन में था वहां सिंचाई और बिजली की बेहतर सुविधा थी और वहां शैक्षणिक और स्वास्थ्य संस्थान भी अधिक बेहतर थे। हालांकि जैसे-जैसे समय बीतता गया निःशुल्क बिजली और पानी की सुविधा के कारण पानी के ज्यादा इस्तेमाल वाली फसलों को बढ़ावा मिला। इससे मिट्टी की उर्वरता में कमी आई और क्षेत्र में एक किस्म का ठहराव आ गया।

पश्चिमी तट पर दक्षिण कन्नड़ जिला राज्य के पुनर्गठन के पहले मद्रास प्रेसिडेंसी का हिस्सा था। यह एक जबरदस्त विकास गाथा पेश करता है। मद्रास प्रेसिडेंसी के हिस्से के रूप में और राजधानी से 700 किलोमीटर दूर पूर्वी तट पर होने के कारण जिले के लोगों को सरकार की मौजूदगी महसूस ही नहीं होती। पुनर्गठन के बाद यह मैसूर राज्य का हिस्सा बन गया जो आगे चलकर कर्नाटक कहलाया। 1997 में इसे दो जिलों दक्षिण कन्नड़ और उडुपी में बांट दिया गया। पश्चिमी घाट को पार करने की चुनौती के कारण राजधानी से उसका संपर्क सीमित बना रहा।

इस क्षेत्र के लोग मुंबई से अधिक संपर्क में हैं। 1998 में कोंकण रेलवे के शुरू होने के पहले भी ऐसा ही था। 1960 के दशक के आखिर तक और 1970 के दशक के आरंभ में भी रोज कम से कम 200 लक्जरी बसें मंगलूरु और मुंबई के बीच चलती थीं। देश का पहला निजी स्ववित्त-पोषित मेडिकल कॉलेज उडुपी के पहाड़ी इलाके मणिपाल में स्थापित किया गया। इस क्षेत्र का उच्च जनसंख्या घनत्व, जीवंत मंदिर संस्कृति और बड़े ब्राह्मण समुदाय ने भारी मात्रा में पाक कला में कुशल कामगार तैयार किए। ये देश के अलग-अलग इलाकों में गए और उन्होंने उडुपी फास्टफूड रेस्तरां चेन की शुरुआत की।

अर्द्ध शहरी इलाकों में निजी बैंकों की स्थापना में भी उद्यमिता की भावना नजर आई। पहले दो बैंक केनरा बैंक और कॉर्पोरेशन बैंक 1906 में स्थापित हुए। 1923 में सिंडिकेट बैंक और 1924 में विजया बैंक की स्थापना हुई। ये सभी बड़े बैंक बने और इनका राष्ट्रीयकरण किया गया। बैंकिंग की लेनदेन लागत कम रखने तथा उपभोक्ताओं के अनुकूल माहौल तैयार करने के लिए बैंकरों ने वित्तीय समावेशन की नवाचारी तकनीक अपनाई और समुदाय की युवा लड़कियों को मैट्रिक के बाद रोजगार दिया। इसके परिणामस्वरूप एक तरह की सामाजिक क्रांति की स्थिति बनी और महिलाओं का सशक्तीकरण हुआ। 1980 में बैंक अर्थशास्त्रियों के सम्मेलन का उद्घाटन करने के लिए जिले के अपने दौरे पर पहुंचे रिजर्व बैंक के तत्कालीन गवर्नर आईजी पटेल ने कहा था कि यह उनकी बैंकिंग क्षेत्र की 'तीर्थ यात्रा' थी। कर्नाटक के दो तटीय जिलों के अनुभव से समावेशी विकास के कई सबक सीखे जा सकते हैं। इन दोनों जिलों के मानव विकास संकेतक दुनिया के श्रेष्ठतम संकेतकों के बराबर है।

राज्य के विकास में लोक नीति की क्या भूमिका रही है? बेंगलूरु में ऐतिहासिक रूप से उल्लेखनीय वैज्ञानिक संस्थान और शीर्ष सार्वजनिक उपक्रमों ने वृद्धि के लिए अनुकूल माहौल तैयार करने में मदद की। हाल के वर्षों में अत्यधिक अमीर लोग शहर में आए हैं इसके चलते अधोसंरचना पर जबरदस्त दबाव पड़ा। नीति निर्माता मोटे तौर पर जरूरतों पर ध्यान दे रहे हैं बजाय कि विकास की सक्रिय नीति के। दो तटवर्ती जिलों की बात करें तो विकास पूरी तरह निजी क्षेत्र के हवाले रहा और कोई सरकारी पहल नहीं दिखी। चुनावी राजनीति के कारण राज्य ने सब्सिडी और हस्तांतरण में लगातार वृद्धि की है, जिससे पूंजीगत कार्यों और मानव विकास पर खर्च कम हो गया है। राज्य में निरंतर और संतुलित विकास के लिए नीतियों को नए सिरे से तय करना होगा।

(लेखक कर्नाटक क्षेत्रीय असमानता निवारण समिति के अध्यक्ष हैं। ये उनके निजी विचार हैं)

सिनेमा बाजार की हिस्सेदारी बढ़ाने की क्या हो रणनीति

देश के फिल्म कारोबार से जुड़ी कई खुश करने वाली कहानियां देखने को मिलती हैं, आपको बस उन्हें ढूंढ़ने की जरूरत है। आमिर खान प्रोडक्शंस ने हाल में रिलीज हुई अपनी फिल्म 'सितारे जमीन पर' के लिए एक बड़ा फैसला लिया। उन्होंने सिनेमाघर में फिल्म रिलीज कराने और उसे दिखाए जाने के बीच कहीं और यानी किसी ओटीटी के लिए कोई करार नहीं किया। उनका मानना था कि किसी फिल्म के सिनेमाघरों में रिलीज होने और ओटीटी मंच पर आने के बीच का समय जितना कम होगा, दर्शक वर्ग छोटी फिल्मों को थिएटर में देखने जाने से उतना ही बचेंगे। सच तो यह है कि 'सितारे जमीन पर' जैसी फिल्मों की कहानी ही उसकी मुख्य पहचान है, जबकि 'पुष्पा 2' या 'पठान'जैसी फिल्में बड़े फिल्मी सितारों पर निर्भर होती हैं।

आमिर खान अपने स्टूडियो के मालिक भी हैं ऐसे में वह फिल्मों की दो से छह हफ्ते की छोटी रिलीज अवधि को लेकर हमेशा मुखर रहे हैं। इस बार भी उन्होंने अपने सिद्धांतों पर अमल करते हुए वहीं पैसा लगाया जिसकी बात वह अब तक करते रहे हैं। 'सितारे जमीन पर' की सफलता ने उन फिल्म स्टूडियो को हौसला दिया है जो अक्सर फिल्म रिलीज से पहले कमाई के लिए स्ट्रीमिंग मंचों के साथ बेहतर करार नहीं कर पाते हैं।

फिल्म कारोबार से जुड़ी एक और सफल कहानी के लिए पश्चिम बंगाल का रुख करते हैं। वर्ष 2000 में इस राज्य में 400 सिनेमाघर थे, वहीं 2015 तक यह संख्या घटकर 140 रह गई थी, जिसके कारण इस क्षेत्र के सबसे बड़े स्टूडियो एसवीएफ एंटरटेनमेंट की कमाई कम हो गई थी। 'चोखेर बाली' और 'रेनकोट' जैसी फिल्मों की निर्माता कंपनी, एसवीएफ के पास अपना ओटीटी प्लेटफॉर्म होइचोई भी है और वह हजारों घंटे की स्ट्रीमिंग और टीवी प्रोग्रामिंग भी तैयार करती है। लेकिन सिनेमाघरों का बंद होना एक बड़ा संकट था क्योंकि वास्तव में सिनेमाघरों से होने वाली कमाई ही सिनेमा उद्योग का इंजन है। वर्ष 2024 में भारतीय फिल्मों ने लगभग 20,000 करोड़ रुपये की कमाई की जिनमें से दो-तिहाई कमाई थिएटर से होती है और यह स्ट्रीमिंग या टेलीविजन कंपनियों द्वारा भुगतान की जाने वाली राशि भी निर्धारित करता है।

आमिर खान की तरह, एसवीएफ के सह-संस्थापक महेंद्र सोनी ने इस समस्या का सीधा समाधान करने का फैसला किया। उन्होंने छोटे शहरों और कस्बों में सिनेमा स्क्रीन का प्रबंधन करना और स्क्रीन की खरीद करनी शुरू कर दी। फिलहाल उनके पास 53 स्क्रीन हैं और मार्च 2026 तक यह संख्या 75 हो जाएगी। पश्चिम बंगाल में जैसे-जैसे स्क्रीन की संख्या बढ़ी, शुद्ध बॉक्स ऑफिस कमाई में एसवीएफ की हिस्सेदारी दोगुनी हो गई।

मीडिया मंत्र

वनिता कोहली-खांडेकर

दो दशकों से भारत में सिनेमा स्क्रीन की संख्या कम हुई है और यह 1990 के दशक के अंत में 12,000 से घटकर अब लगभग 8,000 रह गई है। यह सब फिल्म स्टूडियो के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। दुनिया में सबसे ज्यादा फिल्में बनाने वाले देश में प्रति 10 लाख लोगों पर महज छह सिनेमा स्क्रीन हैं जबकि अमेरिका में यह आंकड़ा 125 और चीन में 30 है। अगर आप सवाल करते हैं कि ज्यादा स्क्रीन क्यों नहीं बन रहा है तब थिएटर चेन, मौजूदा सिनेमाघरों में 20-30 प्रतिशत दर्शकों की ओर इशारा करते हैं और वे सही भी हैं। लेकिन एसवीएफ दिखाता है कि कहानी का एक और पहलू भी है।

सिनेमा स्क्रीन में बहुत निवेश हो रहा है और यह उन क्षेत्रों पर केंद्रित है जहां टिकट की कीमतें ज्यादा हैं और तुरंत रिटर्न संभव है। जब पश्चिम बंगाल में सिनेमा स्क्रीन की तादाद घट रही थीं तब कोलकाता में यह दर स्थिर रही क्योंकि यह एक बहुभाषी महानगर है जहां टिकट की औसत कीमतें अधिक हैं। यहां हिंदी, हॉलीवुड और बांग्ला सिनेमा सभी के लिए जगह है। कोलकाता के बाहर, केवल बांग्ला फिल्में चलती हैं, लेकिन सिनेमा स्क्रीन के बिना, यह दर्शक वर्ग गायब हो गया। जब एसवीएफ ने सिनेमाघरों को फिर से शुरू करने की कवायद की तब पूरा शहर, फिर से इस खेल में वापस जुड़ गया।

यही बात वास्तव में, इस लेख का मुख्य बिंदु है। दीर्घकालिक समस्याओं से बाहर निकलने के कई तरीके हैं और इसके लिए केवल साहस की आवश्यकता है। बहुत लंबे समय से वास्तविक मुद्दों यानी स्क्रीन की कमी, पूंजी की कमी और उचित मार्केटिंग की कमी को बेतुकी दलीलों के पीछे छिपाया गया है। मल्टीप्लेक्स बनाम सिंगल स्क्रीन फिल्में, ओटीटी बनाम थिएटर, हिंदी बनाम दक्षिण से जुड़ी छोटी बहसें एक ऐसे बाजार से संबंधित है जिसकी हिस्सेदारी नहीं बढ़ पा रही है।

भारत में सिनेमाघरों की कमाई, पांच साल से अधिक समय से लगभग 11,000 करोड़ रुपये से 12,000 करोड़ रुपये के बीच अटकी हुई है। हालांकि 2023 जैसे एक बेहतर वर्ष में, 94.3 करोड़ टिकट बेचे गए। 'थिएटर जाने वाली आबादी' 12.2 करोड़ या लगभग 11 फीसदी है जबकि यूरोप और अमेरिका में यह आबादी 50 से 80 फीसदी है। सबसे बड़ी हिट फिल्में देखने के लिए भी लगभग 3.5 करोड़ लोग या सिर्फ 2 फीसदी आबादी ही सिनेमाघरों में जाती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि बड़ी संख्या में भारतीयों को स्थानीय सिनेमा की सुविधा नहीं मिल पाती है।

गौर करने वाली बात यह है कि सिनेमा की कुल खपत बहुत ज्यादा है। सिनेमा के खाते में टीवी देखने वालों का एक-चौथाई हिस्सा, ओटीटी का एक-तिहाई और म्यूजिक सुनने वालों का तीन-चौथाई हिस्सा आता है। लेकिन यह हमारी टिकट बिक्री में नहीं दिखता है।

तीन दशकों से एक दुष्चक्र सा बन गया है। सिनेमा स्क्रीन की कमी का मतलब कम पूंजी जुटना है और इसलिए कम फिल्में बन रही हैं। थोड़े समय के लिए, सैटेलाइट अधिकार और अब स्ट्रीमिंग के जरिये इस उद्योग को तुरंत पैसा मिला लेकिन इसके कारण और भी सिनेमाघर कम हो गए। महामारी के कारण इनकी तादाद काफी कम हो गई। इसका परिणाम यह है कि मुख्य राजस्व स्रोत कम हो रहा है भले ही लोग मनोरंजन के लिए बाहर निकल रहे हैं। जब दो अरब या उससे ज्यादा टिकट बिकेंगे और अधिक लोग फिल्में देखने के लिए अक्सर जाएंगे तब देश के फिल्म कारोबार का बड़ा आकार और क्षमता दिखेगी।

सिनेमा उद्योग को पश्चिम बंगाल में एसवीएफ या दक्षिण भारत में पीवीआर-आईनॉक्स जैसे मल्टीप्लेक्स के अलावा भी काफी चीजों की जरूरत है। इसके लिए सरकार के हस्तक्षेप की भी जरूरत है यानी थियेटर बनाने के लिए कर छूट जैसे कदम उठाए जा सकते हैं क्योंकि ये भी बुनियादी ढांचा का हिस्सा हैं। वर्ष 2001 में मल्टीप्लेक्स का उभार भी कुछ ऐसे ही हुआ था। इसके अलावा गैर-रणनीतिक निवेशकों की भी जरूरत है जैसे कि अदार पूनावाला ने धर्मा प्रोडक्शंस में निवेश किया है।

दुखद बात यह है कि मनोरंजन के अन्य साधनों से मिल रही कड़ी प्रतिस्पर्द्धा के बावजूद, फिल्म स्टूडियो मार्केटिंग पर पूरा ध्यान नहीं दे रहे हैं। उनकी मार्केटिंग का तरीका बेहद घिसा-पिटा और पूरी तरह से ऑनलाइन हो गया है।

हाल ही में पुणे के आईनॉक्स इनसिग्निया में जहां 'मिशन-इम्पॉसिबल-द फाइनल रेकनिंग' फिल्म लगी थी वहां सेल्फी के लिए एक भी पोस्टर या स्टैंडी नहीं था। बाद में वहां मेरे दोस्तों ने एक बांग्ला फिल्म देखी और सिनेपॉलिस में 'सितारे जमीन पर' देखी, वहां भी ऐसा ही हाल था। अगर फिल्मों की मार्केटिंग सिर्फ ऑनलाइन और उन्हीं दर्शकों तक होगी जो संभवतः उन्हें देख सकते हैं तब आखिर बाजार का विस्तार कैसे होगा?

आपका पक्ष

चुनाव से पहले बिहार में बढ़ता अपराध चिंताजनक

बिहार में अगले तीन-चार महीनों में विधान सभा चुनाव होने वाले हैं। उससे पहले राज्य में अपराध का ग्राफ अचानक से बढ़ गया है। विपक्षी दल प्रदेश की कानून-व्यवस्था पर सवाल उठा रहे हैं, तो सत्तारूढ़ पार्टियां अपराधियों की जल्द से जल्द गिरफ्तारी होने का दावा कर रही हैं। खबरों के अनुसार इस महीने बिहार में 54 से ज्यादा हत्याएं हो चुकी हैं। पटना में व्यवसायी व भाजपा नेता की घर के बाहर गोली मारकर की गई हत्या हो या पूर्णिया में महिला पर डायन होने का आरोप लगाकर पूरे परिवार को जलाकर मार देने का मामला, इन सभी घटनाओं से ऐसा लगने लगा है कि अपराधियों से पुलिस-प्रशासन का इकबाल खत्म होने लगा है। सिर्फ जुलाई महीने में ही व्यवसायी, भाजपा नेता, 60 वर्षीय एक महिला, एक दुकानदार, एक वकील और एक शिक्षक सहित कई लोगों की हत्याओं ने चुनाव से पहले बिहार को दहला दिया है। राज्य

अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि बिहार में इस साल जनवरी से जून के बीच हर महीने औसतन हत्या के 229 मामले दर्ज किए गए हैं

अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के हालिया आंकड़े बताते हैं कि राज्य में इस साल जनवरी से जून के बीच हर महीने औसतन 229 हत्याओं के साथ हत्या के 1,376 मामले दर्ज किए गए, जबकि साल 2024 में यह संख्या 2,786 और 2023 में 2,863 थी। व्यापारियों, राजनेताओं, वकीलों, शिक्षकों और आम नागरिकों को निशाना बनाकर एक के बाद एक अंजाम दी जा रहीं हत्या की घटनाओं ने बिहार की कानून-व्यवस्था को लेकर गंभीर चिंताएं पैदा कर दी हैं। पुलिस ने इन घटनाओं के लिए अवैध हथियारों और गोला बारूद की व्यापक उपलब्धता को जिम्मेदार ठहराया है।

श्रीराम रजक, पूर्णिया

ई-वाहन की सफलता के लिए चार्जिंग सुविधा जरूरी

चीन और दुनिया के कई देशों में इलेक्ट्रिक कारों की बिक्री ने सामान्य कारों को पीछे छोड़ दिया है। भारतीय बाजार में भी इलेक्ट्रिक वाहनों (ईवी) की बिक्री की रफ्तार तेज होने लगी है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक, कैलेंडर वर्ष 2024 में देश में कुल 19.5 लाख ईवी (हर तरह के वाहन) की बिक्री हुई है, जो कुल वाहन बिक्री का 3.6 प्रतिशत है। बिक्री में वृद्धि की दर 27 प्रतिशत है। एसबीआई कैप्स की ओर से 24 जनवरी को जारी एक रिपोर्ट के मुताबिक, वर्ष 2030 तक देश में कुल वाहनों की बिक्री में ईवी की हिस्सेदारी बढ़कर 35 प्रतिशत तक हो सकती है। लेकिन ईवी को लेकर कार कंपनियों और आम ग्राहकों का सारा उत्साह चार्जिंग स्टेशनों की कमी, स्थापित चार्जिंग स्टेशनों की खराब सेवा और नीतिगत उत्साहहीनता की वजह से ठंडा पड़ सकता है। स्थिति यह है कि 25-30 लाख रुपये की इलेक्ट्रिक खरीदने वाले ग्राहक भी अपनी कारों को लेकर लंबी दूरी पर जाने से हिचकते हैं। राजमार्गों पर तो चार्जिंग सुविधाओं की कमी साफ तौर पर दिखती है। रिपोर्ट बताती है कि केंद्र की तरफ से जीएसटी की दर को घटाना, राज्य सरकारों की तरफ से सब्सिडी, रोड टैक्स में छूट आदि से बहुत सारे ग्राहक ऐसे हैं जो अपनी पहली कार ही ईवी ले रहे हैं। लेकिन चार्जिंग सुविधाएं इसके साथ कदमताल नहीं कर पा रही हैं। देश में करीब 25 हजार चार्जिंग स्टेशन लग चुके हैं लेकिन फास्ट चार्जिंग सुविधाएं बहुत कम हैं।

सुधीर कुमार सोमानी, देवास

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

सशस्त्र बल चिकित्सा सेवा (एएफएमएस) की महानिदेशक सर्जन वाइस एडमिरल आरती सरीन ने पुणे में सशस्त्र बल चिकित्सा महाविद्यालय (एएफएमसी) में युद्ध शल्य चिकित्सा संग्रहालय का दौरा किया। संग्रहालय में कलाकृतियां, दुर्लभ शल्य चिकित्सा उपकरण, युद्धक्षेत्र डायरियां, घायल सैनिकों के शरीर से निकाले गए छर्रे तथा विभिन्न अभियानों में सेवा देने वाले सैन्य चिकित्सकों की व्यक्तिगत वस्तुएं रखी गई हैं।

अमर उजाला
प्रवाह
77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा
नई दिल्ली ■ मंगलवार, 15 जुलाई 2025

अब दुनिया को सबसे ज्यादा जरूरत जिस चीज की है, वह है भाईचारा। -ए पॉवेल डेविस

बिहार में मतदाता सूची के गहन पुनरीक्षण के दौरान हुआ यह खुलासा गंभीर है कि इसमें बड़ी संख्या में विदेशी घुसपैठियों के नाम शामिल हैं। विरोध की राजनीति अपनी जगह, पर राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े इस मसले में यह भी सुनिश्चित करना होगा कि लोकतंत्र की गरिमा बनी रहे और किसी नागरिक का मताधिकार प्रभावित न हो।

मतदाता सूची में घुसपैठ

बिहार में विधानसभा चुनाव से पहले चुनाव आयोग द्वारा शुरू किए गए विशेष गहन पुनरीक्षण अभियान (एसआईआर) के दौरान हुए इस खुलासे ने एक बेहद गंभीर मुद्दे को उजागर किया है कि मतदाता सूची में बड़ी संख्या में बांग्लादेश, म्यांमार और नेपाल से आए घुसपैठियों के नाम शामिल हैं। उल्लेखनीय है कि चुनाव आयोग के बूथ-स्तरीय अधिकारियों (बीएलओ) ने घर-घर जाकर अपनी रिपोर्ट तैयार की है, जिसमें बताया गया है कि इन घुसपैठियों की संख्या लाखों में हो सकती है, जो राष्ट्रीय सुरक्षा के लिहाज से भी एक गंभीर मामला है। आयोग की तरफ से इन घुसपैठियों के नाम मतदाता सूची में शामिल होने का कोई विवरण नहीं दिया गया है, लेकिन पता चला है कि इनमें से ज्यादातर ने अवैध तरीकों से आधार, राशन कार्ड और मूल निवास प्रमाणपत्र आदि दस्तावेज प्राप्त किए हैं। यह विचारणीय है कि बिहार जैसे सीमावर्ती राज्य में घुसपैठ और अवैध प्रवास की समस्या आखिर क्यों वर्षों से बनी हुई है। यही नहीं, इन बाहरी नागरिकों को स्थानीय पहचान और दस्तावेज कैसे मिल जाते हैं, यह भी एक बड़ा सवाल है। जाहिर है कि यह मामला गंभीर प्रशासनिक चूक को दर्शाता है और अवैध प्रवास के खिलाफ चल रही कार्रवाई की जरूरत को भी रेखांकित करता है। चुनाव आयोग ने स्पष्ट किया है कि एक से तीस अगस्त के बीच इनकी गहन जांच होगी और नागरिकता की स्थिति पुष्ट न हो पाने की सूरत में अंतिम मतदाता सूची में इनका नाम शामिल नहीं होगा। यह कदम निश्चित रूप से स्वागतयोग्य है, क्योंकि संविधान का अनुच्छेद 326 भी कहता है कि केवल भारतीय नागरिकों को ही मतदान का अधिकार होगा। गौरतलब है कि विपक्ष भले ही एसआईआर प्रक्रिया की तुलना राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (एनआरसी) से कर रहा है और शीर्ष अदालत ने भी इस कवायद के समय पर सवाल उठाए हैं, लेकिन इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मतदाता सूची को दुरुस्त रखना चुनाव आयोग की जिम्मेदारी है और मतदाता सूची पुनरीक्षण की

यह संपूर्ण कार्रवाई जनप्रतिनिधित्व अधिनियम और निर्वाचन पंजीकरण नियमावली, 1960 के नियमों के अनुरूप ही हो रही है। उल्लेखनीय है कि बिहार इस वर्ष विधानसभा चुनाव की ओर बढ़ रहा है, और अगले वर्ष असम, केरल, पुदुचेरी, तमिलनाडु और पश्चिम बंगाल में भी चुनाव होने हैं। लिहाजा चुनाव आयोग की यह पहल पूरे देश में मतदाता सूची को दुरुस्त करने की दिशा में एक बड़ा कदम हो सकती है। बिहार का अनुभव बताता है कि यह एक जटिल और संवेदनशील मुद्दा है, ऐसे में, चुनाव आयोग को राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़े इस मामले में पारदर्शिता और निष्पक्षता के साथ कदम बढ़ाने होंगे, ताकि लोकतंत्र की गरिमा बरकरार रहे और किसी नागरिक का मताधिकार भी प्रभावित न हो।

कूटनीतिक संतुलन बनाने की चुनौती

दलाई लामा को शरण और उनके उत्तराधिकार पर स्पष्ट राय देने से चीन भारत से नाराज है, तो शेख हसीना को शरण देने से बांग्लादेश की अंतरिम सरकार खफा है। लेकिन इन नाराजगियों के बावजूद मजबूत नेता के नेतृत्व में भारत शरणार्थियों की रक्षा के अपने रुख पर कायम है।

पश्चिम एशिया में ईरान और इस्राइल के बीच या यूक्रेन में पुतिन के युद्ध को लेकर भारतीय कूटनीति के लिए नाजुक संतुलन की बड़ी चुनौतियां हैं। लेकिन इस समय आध्यात्मिक गुरु दलाई लामा और बांग्लादेश की बेदखल प्रधानमंत्री शेख हसीना की मौजूदगी के चलते भारत को ज्यादा प्रत्यक्ष चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। दलाई लामा के उत्तराधिकार के मामले में भारत का स्पष्ट रुख है कि इस प्रक्रिया को तिब्बती नेताओं और उनके समुदाय पर छोड़ देना चाहिए, जिससे चीन नाखुश है। भारतीय केंद्रीय मंत्री किरेन रिजिजू की इस मामले में टिप्पणी से बीजिंग और चिढ़ गया है, क्योंकि रिजिजू अरुणाचल प्रदेश के बौद्ध हैं, जिस पर चीन दावा जताता रहा है।

सुबीर भौमिक
वरिष्ठ पत्रकार

बीजिंग के विदेश कार्यालय के प्रवक्ता ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा दलाई लामा को 90वें जन्मदिन पर बधाई देने पर भी आपत्ति जताते हुए कहा कि चीन अपने आंतरिक मामले में कोई भी हस्तक्षेप बर्दाश्त नहीं करेगा।

बीजिंग की दुविधा : मौजूदा दलाई लामा ने यह कहकर चीन को असमंजस में डाल दिया था कि 2024 के अंत तक वह तय करेंगे कि उनके निधन के बाद दलाई लामा की संस्था जारी रहेगी या नहीं। अगर वह ऐसा करते, तो उत्तराधिकार का कोई मुद्दा नहीं होता और तिब्बती समुदाय का नेतृत्व धर्मशाला स्थित निर्वाचित, निर्वासित सरकार और एक सिक्योंग (राष्ट्रपति) द्वारा संचालित केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के हाथों में चला जाता। दरअसल, दलाई लामा ने तिब्बती समुदाय से जुड़े ज्यादातर मामलों को सिक्योंग और निर्वासित सरकार के हवाले कर दिया है। पर सिक्योंग में दलाई लामा जैसा आध्यात्मिक आकर्षण नहीं होगा, जो तिब्बत के अंदर और बाहर, तिब्बती समुदाय पर अपना निरंतर प्रभाव बनाए रख सके और दुनिया में तिब्बत की विशिष्ट पहचान को जीवित रख सके।

निर्वासित तिब्बती सरकार चीन के लिए एक चुनौती बनी रहेगी, लेकिन अगर दलाई लामा जैसी संस्था नहीं रही, तो बीजिंग निर्वासित

सरकार को अलगाववादी बताकर भारत पर दबाव डाल सकता है कि वह उसे अपनी धरती पर शरण और समर्थन न दे। इसी साल प्रकाशित *वॉइस फॉर द वॉइसलेस* में दलाई लामा ने कहा है कि उनका उत्तराधिकारी एक स्वतंत्र दुनिया में जन्म लेगा, यानी चीन से बाहर, जिससे चीन काफी नाराज था। इसे दलाई लामा के उत्तराधिकार में चीनी सरकार की किसी भी भूमिका को नकारने की एक चतुर चाल के रूप में देखा गया। यदि वर्तमान दलाई लामा चीन के बाहर अपना उत्तराधिकारी घोषित करेंगे, तो चीनी शासक तिब्बतियों पर अपना दलाई लामा थोपने की कोशिश करेगा। नतीजतन दो दलाई लामा होंगे-एक चीन समर्थित दलाई लामा, और दूसरा वर्तमान दलाई लामा के उत्तराधिकार प्रक्रिया के जरिये बनाया गया दलाई लामा।

बीजिंग का वार्ता से इन्कार : चीन द्वारा मौजूदा दलाई लामा को 'अलगाववादी' कहने के बावजूद तिब्बती आध्यात्मिक नेता ने तिब्बती स्वतंत्रता के लिए सशस्त्र विद्रोह का समर्थन नहीं किया है, जैसा कि 1950 के दशक के अंत में उग्र खंपाओं ने सशस्त्र विद्रोह किया था। उन्होंने तिब्बत के भविष्य का फैसला करने के लिए बीजिंग के साथ बातचीत की मांग की है। 2005 में मैंने दलाई लामा का एक साक्षात्कार लिया था, तब उन्होंने तिब्बत लौटने और अपने जीवने के अंतिम वर्ष वहीं बिताने की इच्छा जाहिर की थी। शी जिनपिंग जब राष्ट्रपति बने, तब संकेत मिले थे कि वह दलाई लामा को बातचीत के लिए बुलाएंगे, लेकिन शायद उनकी मजबूत छवि न बिगड़े, इस वजह से वह पीछे हट गए। भारतीय लोकतंत्र में जातीय अलगाववाद को दूर करने के लिए ऐसे समाधान खोजे गए हैं, लेकिन कम्युनिस्ट चीन या सैन्य-प्रधान पाकिस्तान में इन्हें पसंद नहीं किया जा रहा है।

भारत के लिए निहितार्थ : संकेत हैं कि तिब्बत विवाद लंबा चलेगा और इसमें भारत को भी घसीटा जाएगा। सीमा विवाद पर भारत और चीन के बीच कुछ प्रगति हुई है, लेकिन दलाई लामा के उत्तराधिकार को लेकर भारत का रुख बीजिंग को नागवार गुजरेगा, जिससे सीमा वार्ता में खलल पड़ सकता है और चीनी सेना (पीएलए) हिमालयी सीमा पर फिर से घुसपैठ शुरू कर सकती है। भारत पहले से ही भूटान पर बढ़ते चीनी दबाव को लेकर चिंतित है। सीमा विवाद को फिर से शुरू करने और पड़ोस में शत्रुतापूर्ण कदम उठाने के अलावा, चीन भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में उग्रवादियों को समर्थन देना भी शुरू कर सकता है।

बांग्लादेश की नाराजगी : बीते साल अगस्त में हुए छात्र आंदोलन के बाद से ही बांग्लादेश की बेदखल प्रधानमंत्री शेख हसीना भारत में शरण ली हुई हैं। बिमस्टेक सम्मेलन से इतर बैंकॉक में हुई बैठक में मोहम्मद यूनुस ने प्रधानमंत्री मोदी से शेख हसीना पर लगाम लगाने का अनुरोध किया था, जिसे मोदी ने यह कहते हुए नकार दिया कि सोशल मीडिया के दौर में अभिव्यक्ति की आजादी से किसी को नहीं रोका जा सकता। यूनुस सरकार पहले ही हसीना के खिलाफ दायर अनगिनत मामलों में मुकदमा चलाने के लिए उनके प्रत्यर्पण की औपचारिक मांग कर चुकी है। अब उनकी अनुपस्थिति में उन पर मुकदमा चलाया जा रहा है। यदि बांग्लादेश सरकार शेख हसीना के प्रत्यर्पण के लिए इसमें इंटरपोल को शामिल करती है, तो भारत खुद को मुश्किल स्थिति में पाएगा, क्योंकि दोनों देशों के बीच प्रत्यर्पण संधि मौजूद है। हसीना लगातार अपनी पार्टी के नेताओं और कार्यकर्ताओं से संपर्क में हैं और यूनुस पर आरोप लगाकर उनकी मुसीबतें बढ़ा रही हैं। यूनुस चीन, अमेरिका और पाकिस्तान के चहेते बने हुए हैं, लेकिन भारत में अवामी लीग के हजारों नेताओं और समर्थकों की मौन सहमति यूनुस की चिंता बढ़ा रही है।

दलाई लामा की तरह हसीना को भी भारत समर्थन दे रहा है। दलाई लामा को भारतीय समर्थन आध्यात्मिक कारणों से प्राप्त है, तो हसीना को राजनीतिक कारणों से। हसीना और उनके दिवंगत पिता शेख मुजीबुर रहमान भारत के विश्वसनीय सहयोगी रहे हैं। किसी भी स्थिति में हसीना से समर्थन वापस लेना भारत की कमजोरी के रूप में देखा जाएगा। एक क्षेत्रीय शक्ति के लिए यह विकल्प अस्वीकार्य है, जो एक ऐसे प्रधानमंत्री के नेतृत्व में वैश्विक मंच पर अपनी भूमिका निभाने की आकांक्षा रखती है, जो अपनी मजबूत छवि का दावा करता है। इसका मतलब यह भी है कि भारत को इसके नतीजे भुगतने के लिए तैयार रहना होगा।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

खलील जिब्रान

मैंने प्रकृति की ओर देखा और गहरे चिंतन से एक अनंत और विस्तृत वस्तु की खोज की-एक ऐसी वस्तु-जिसे कोई शक्ति छीन नहीं सकती और धन खरीद नहीं सकता है-वह है प्रेम।

प्रेम हमें धैर्य का आशीर्वाद देता है

उस दिन सूर्य ने अपनी किरण उद्यान से समेटी और चंद्रमा ने कोमल चंद्रिका फूलों पर बिखराई, मैं पेड़ के नीचे बैठा हुआ प्रकृति की अद्भुत सुंदरता के बारे में विचार कर रहा था। जब चिड़ियों ने डालियों पर बसेरा लिया और फूलों ने अपनी पंखुड़ियां समेट लीं और चारों ओर घोर निस्तब्धता छा गई। इस दौरान अलग-अलग समय पर मैंने दो दृश्य देखे। पहले, मुझे घास में पैरों की आहट सुनाई दी। मैंने देखा कि एक युवा प्रेमी जोड़ा आकर पेड़ के नीचे बैठ गया। युवक ने आसपास नजर घुमाई और बोला, 'मेरे पास बैठो, मेरी प्रेयसी, और हृदय की वाणी सुनो। मुस्कराओ, क्योंकि तुम्हारा सुख हमारे भविष्य का प्रतीक है, खुशियां मनाओ, क्योंकि जगमगाते हुए दिन हमारे आनंद का साथ दे रहे हैं। मेरी आत्मा तुम्हारे संदेह की मुझे सूचना दे रही है, क्योंकि प्रेम में संदेह पाप है।' वह आगे बोला, 'सुख और यात्रा के बारह मास हमारे सामने हैं, एक वर्ष तक हम अपने पिता का धन स्विट्जरलैंड की नीली झीलों पर और मिस्र तथा इटली के भवनों को देखने में और लेबनान के पवित्र देवदारों के नीचे विश्राम करने में खर्च करेंगे, तुम राजकुमारियों से भेंट करोगी, जो तुम्हारे आभूषणों और आभरणों के कारण तुमसे ईर्ष्या करेंगी। मैं यह सब तुम्हारे लिए करूंगा, क्या तुम संतुष्ट होगी?' थोड़ी देर बाद दोनों फूलों को रौंदते हुए ऐसे चले गए, जैसे धनवान गरीबों के हृदयों को कुचलते हैं। जैसे ही वे मेरी दृष्टि से ओझल हुए, मैं प्रेम और धन की तुलना करने लगा।

मैं चिंतन की विशाल मरुभूमि में ही चक्कर काट रहा था कि निराश्रय व कंकाल सदृश प्रेमियों का एक जोड़ा मेरे पास से गुजरा और घास पर बैठ गया। निस्तब्धता के कुछ क्षणों के बाद, मैंने ये शब्द सुने, 'आंसू न बहाओ मेरी प्रेयसी, प्रेम जो हमारी आंखें खोलता है व हृदयों को बंदी बनाता है, हमें धैर्य के आशीर्वाद दे सकता है। हमारे विलंब में धैर्य रखो, क्योंकि हमने एक सौगंध खाई है और प्रेम के मंदिर में प्रवेश किया है, क्योंकि हमारा प्रेम संकट में निरंतर बढ़ता रहेगा। यह प्रेम के कारण है कि हम निर्धनता के रोड़े व वियोग की शून्यता सह रहे हैं। मैं इन कठिनाइयों से तब तक संघर्ष करूंगा, जब तक कि जीत न जाऊं और तुम्हारे हाथों में वह शक्ति न रख दूं, जो जीवन-यात्रा पूर्ण करने के लिए सारे संकटों से पार पाने में सहायक होगी।'

प्रेम को जलाने वाली शिखा और आकांक्षा की निराशापूर्ण कटुता और धैर्य की सुस्थिर माधुरी से मिश्रित एक पवित्र वाणी ने कहा, 'अलविदा, मेरे प्रिय।' वे विलग हुए और मेरे रोते हुए हृदय की चीत्कारों ने उनके मिलन के मर्सिये को दबा दिया। इसके बाद मैंने प्रकृति की ओर देखा और गहरे चिंतन से एक अनंत और विस्तृत वस्तु की खोज की-एक ऐसी वस्तु-जिसे कोई शक्ति छीन नहीं सकती, न धन खरीद सकता है। न ही उसे समय के आंसू मिटा सकते हैं, न शोक नष्ट कर सकता है, एक वस्तु, जो स्विट्जरलैंड की नीली झीलों अथवा इटली के भव्य भवनों से प्राप्त नहीं हो सकती। वह एक ऐसी वस्तु है, जो धैर्य के साथ शक्ति प्राप्त करती है, बाधाओं के उपरांत बढ़ती है, शीतकाल में उष्ण होती है, वसंत में शोभायमान होती है, ग्रीष्म में समीर बन बहती है और पतझड़ में फलती है-मैंने प्रेम को पाया।

प्रेम में समर्पण जरूरी

सूत्र

प्रेम अनंत है। इसमें चाहिए समर्पण और सौंदर्य। प्रेम अपने सिवाय न कुछ देता और न ही कुछ लेता है। प्रेम किसी पर अधिकार नहीं जताता और न ही किसी का अधिकार मानता है, क्योंकि प्रेम के लिए प्रेम ही पर्याप्त है। प्रेम की अपनी इच्छाएं नहीं होतीं, सिवाय इसके कि वह स्वयं को पूर्ण करे।

दूसरा पहलू

फिनलैंड की 75 फीसदी जमीन पर घने जंगल हैं। जब परिपक्व पेड़ को काटा जाता है, तो बदले में पौधे भी लगाए जाते हैं।

वह देश, जहां पेड़ बच्चों की तरह पाले जाते हैं

फिनलैंड में जंगल हरियाली नहीं, जीवनशैली का आधार हैं। देश के 75 फीसदी हिस्से पर घने वन हैं। यहां करीब 2.2 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में जंगल हैं, जबकि आबादी 55 लाख है। यानी प्रति व्यक्ति चार हेक्टेयर से ज्यादा जंगल, जो पूरी दुनिया में सबसे ज्यादा हैं। दरअसल, यहां पेड़ उगते नहीं, बच्चे की तरह पाले जाते हैं। हर पेड़ का डिजिटल रिकॉर्ड होता है। उसकी उम्र, ऊंचाई, नमी, विकास दर और स्वास्थ्य की पूरी निगरानी होती है। परिपक्व पेड़ काटने पर उसकी जगह एक से दो पौधे लगाना अनिवार्य होता है।

सोनम लववंशी

फिनलैंड की वन अर्थव्यवस्था करीब 21 अरब यूरो की है। 20 फीसदी औद्योगिक नौकरियां जंगलों से जुड़ी हैं और हर जगह लकड़ी है।

फिनलैंड की वन अर्थव्यवस्था करीब 21 अरब यूरो की है। 20 फीसदी औद्योगिक नौकरियां जंगलों से जुड़ी हैं। घरों से लेकर विश्वविद्यालयों तक, हर जगह लकड़ी है। लकड़ी से बने स्टेडियम, लाइब्रेरी, 14 मंजिला रिहायशी इमारतें भी पर्यावरण और इंजीनियरिंग के संगम की मिसाल हैं। तापमान माइनस 20 डिग्री हो या भारी बर्फबारी हो, लकड़ी की ये इमारतें टिकाऊ, ऊष्मा-संवेदनशील और ऊर्जा बचाने वाली हैं। हेलसिंकी में 'वापले एरेना' स्टेडियम इसका बेहतरीन उदाहरण है, जो पूरी तरह लकड़ी से बना है और 15,000 दर्शकों की क्षमता रखता है। इतना ही नहीं, फिनलैंड की शिक्षा प्रणाली भी पर्यावरण से जुड़ी है। बच्चों को बचपन से जंगलों में घूमकर पेड़ों की पहचान करना, पर्यावरण संतुलन और वन संरक्षण के बारे में सिखाया जाता है। उन्हें यूनिवर्सिटी स्तर पर 'बायोइकनॉमी', 'वुड आर्किटेक्चर' और 'फॉरेस्ट डाटा एनालिटिक्स' जैसे विषय पढ़ाए जाते हैं।

यहां वन निजी हाथों में हैं। लगभग 60 प्रतिशत जंगल ग्रामीण परिवारों के स्वामित्व में हैं और वे इन्हें धरोहर मानते हैं। कोई भी पेड़ तभी काटा जा सकता है, जब उसका वैज्ञानिक मूल्यांकन पूरा हो।

सरकार के पास वनों का सैटेलाइट डाटा है। यहां वन निजी हाथों में हैं। लगभग 60 प्रतिशत जंगल ग्रामीण परिवारों के स्वामित्व में हैं और वे इन्हें धरोहर मानते हैं। कोई भी पेड़ तभी काटा जा सकता है, जब उसका वैज्ञानिक मूल्यांकन पूरा हो। भारत ने 2070 तक कार्बन न्यूट्रल बनने का लक्ष्य तय किया है। लेकिन यहां अब भी लगभग 24.62 प्रतिशत भूमि वनाच्छादित है, जो लगातार घट रही है। भारत में भी हर गांव में वृक्षों की पूजा होती रही है। पीपल, नीम और बरगद जैसे पेड़ सांस्कृतिक चेतना का हिस्सा रहे हैं। लेकिन अब हमें इन मान्यताओं को विज्ञान और प्रबंधन से जोड़ना होगा। फिनलैंड से यह सीखा जा सकता है कि जंगलों को सिर्फ बचाना नहीं है, उन्हें विकसित करना है। पेड़ों को उत्पादन और पर्यावरण के बीच की कड़ी बनाना है। जब तक हम जंगलों को 'उगाना' और 'पालना' नहीं सीखते, तब तक विकास अधूरा रहेगा, क्योंकि प्रकृति कोई बोझ नहीं है। वह सबसे स्थायी निवेश है, जो हवा, पानी, मिट्टी और मनुष्यता सबका आधार है।

आंकड़े

पशु उत्पाद निर्यात

भारत ने वित्त वर्ष 2025 में पशुओं से संबंधित करीब 5.16 अरब डॉलर के उत्पादों का दुनिया भर में निर्यात किया।

वियतनाम	15.74%
मिस्र	13.39%
मलयेशिया	12.31%
यूएई	9.49%
सऊदी अरब	8.00%

आंकड़े भारत से निर्यात होने वाले पशु संबंधी उत्पादों के प्रतिशत में | स्रोत : APEDA

नामदेव जी से गुरु विसोबा जी ने कहा, 'रे नामिया! मैं बूढ़ा हो गया हूं, शिवलिंग से जरा मेरे पैर हटा दे।' नामदेव जी जहां भी पैर रखते, वहीं शिवलिंग आविर्भूत हो जाता।

नामदेव गुरु की सरनाई

पंढरपुर से करीब पचास कोस दूर स्थित औंढिया नागनाथ में शिव भक्त विसोबा खेचर का जन्म हुआ। वह श्री ज्ञानेश्वर महाराज को अपना गुरु मानते थे। वह कहते थे, 'महाविष्णु के अवतार, श्रीगुरु मेरे ज्ञानेश्वर।' विसोबा खेचर भक्त नामदेव जी के गुरु थे।

एक दिन नामदेव जी के अंदर भक्तिभाव को मजबूत करने के लिए संत विसोबा ने लीला रची। नामदेव जी जब उनके पास आए, तो वह शिवलिंग की ओर पैर पसारकर लेटे हुए थे। यह देखकर नामदेव जी को आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा, 'रे नामिया! मैं बहुत बूढ़ा हो गया हूं। अब मुझसे पैर नहीं उठते, एक काम कर, तू इन्हें उठाकर ऐसी जगह रख दे, जहां शिवलिंग न हो।' नामदेव जी ने अपने गुरु के पैर उठाकर दूसरी जगह किए, तो वहां भी शिवलिंग निकल आया। उन्होंने गुरु के पैर दूसरी जगह रखे, तो वहां भी शिवलिंग।

इस तरह आठों दिशाओं में उन्होंने गुरु के पैर रखे, लेकिन हर जगह शिवलिंग देखकर नामदेव गुरु की लीला को समझ गए। उन्होंने गुरु के चरण पकड़ लिए। बताते हैं कि इसके बाद संत विसोबा जी ने नामदेव को भगवान का साक्षात्कार करवाया। नामदेव जी अपने गुरु विसोबा जी के बारे में कहते थे कि ऐसे सद्गुरु की शरण कभी नहीं छोड़नी चाहिए। गुरु की महिमा लिखते हुए वह कहते हैं, *'बिन गुरुदेव और न जाई। नामदेव गुरु की सरनाई॥'*

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 15 जुलाई, 1954

मिस्र ने ब्रिटेन की शर्तें मानने से किया इन्कार

मिश्र ब्रिटेन की शर्तें नहीं मानेगा

ब्रिटेन ने स्वेज क्षेत्र से हटने के बारे में अपनी जो शर्तें मिस्र को सौंपी हैं, उन्हें मिस्र नहीं मानेगा। यानी मिस्र ब्रिटेन को यह अधिकार नहीं देना चाहता कि तुर्किये पर हमला हो, तो वह स्वेज के अड्डों का उपयोग करे।

मेडिकल की पढ़ाई अंग्रेजी में ही क्यों

मध्य प्रदेश में हिंदी भाषा में चिकित्सा शिक्षा की पढ़ाई के साथ ही शुल्क में छूट दी जा रही है, जबकि अन्य राज्य अंग्रेजी के आधिपत्य से मुक्त नहीं हो पा रहे।

डॉ. विवेक एस अग्रवाल | शिक्षा

विदेश में वहां की स्थानीय भाषा में पढ़कर आए चिकित्सकों के लिए तो भारत में जगह है, लेकिन अब भी देश में हिंदी एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में मेडिकल शिक्षा को बढ़ावा देने से हम कोसों दूर हैं। संभवतः इसके पीछे विदेशी से प्रेम और देशी को हेय समझने संबंधी गुलाम मानसिकता का प्रभाव है। यह समझ से परे है कि आजादी के 75 वर्ष बाद वर्ष 2022 में पहली बार मध्य प्रदेश में मेडिकल शिक्षा हिंदी में प्रारंभ हो पाई। हालांकि, कुछ राज्यों ने सीमित तौर पर स्थानीय भाषा में मेडिकल की पढ़ाई संबंधी प्रस्ताव और उद्घोषणाएं की हैं, लेकिन धरातल पर हकीकत कुछ और ही है।

गौरतलब है कि मेडिकल की पढ़ाई के बाद चिकित्सक का पूरा जीवन मरीजों की देखरेख में बीतता है, जो कि अपना संवाद मूलतः स्थानीय या मातृभाषा में ही करते हैं। अंग्रेजी में तो सीमित बातचीत होती है। लेकिन ब्रिटिश औपनिवेशक साम्राज्य के दंश अब भी मेडिकल शिक्षा में अपना प्रभुत्व बनाए हुए हैं। दक्षिणी राज्यों में हिंदी के

विरोध में तो आंदोलन होते रहते हैं, लेकिन अंग्रेजी के आधिपत्य को कम से कम चिकित्सा शिक्षा से कम करने हेतु कोई ठोस कदम नहीं उठाए जाते। यह भी शोध का विषय है कि भारत में चिकित्सा शिक्षा को अंग्रेजी में देना ही क्यों आवश्यक है? राष्ट्रीय शिक्षा नीति एवं वर्तमान सरकार की मंशा स्थानीय भाषाओं को प्रोन्नत करने की है। मौजूदा सरकार अंग्रेजी परस्त नहीं है, इसलिए मेडिकल शिक्षा हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषा में प्रदान करने का इससे बेहतर समय नहीं हो सकता।

वैज्ञानिक रूप से भी मातृभाषा में शिक्षा सर्वाधिक प्रभावी होती है। मैंने खुद अपनी चिकित्सा शिक्षा के दौरान महसूस किया की ग्रामीण अंचल से आने वाले और 12वीं तक की शिक्षा हिंदी या स्थानीय भाषा में हासिल करने वाले छात्र यकायक अंग्रेजी आच्छादित वातावरण में खुद को असहज पाते हैं और कई तो भाषा की विवशता के कारण प्रतिस्पर्धा में पीछे रह जाते हैं। उन में हीन भावना भी पैदा हो जाती है। कई बार तो ऐसे छात्रों को शिक्षक महत्व नहीं देते व उपहास तक उड़ा देते हैं।

एआई के युग में अंग्रेजी में ही चिकित्सा शिक्षा प्रदान करने के पीछे शासन की मजबूरियां समझ से परे हैं। मध्य प्रदेश में शासन की पहल पर लगभग सभी किताबों का हिंदी में अनुवाद कर दिया गया है और हिंदी माध्यम से चिकित्सा शिक्षा हासिल करने पर शुल्क में भी छूट दी जा रही है। शुरुआती वर्ष में ही 30 फीसदी से अधिक छात्रों ने अपनी शिक्षा के लिए हिंदी माध्यम का चुनाव किया। यह इसका द्योतक है कि छात्रों के मानस में अपनी मातृभाषा में पढ़ने की कितनी उत्कंठा है।

एक सरल शुरुआत के रूप में सर्वप्रथम परीक्षा के माध्यम में मातृभाषा का विकल्प प्रदान कर विद्यार्थियों को प्रतिस्पर्धा के इस दौर में सक्षम बनाया जा सकता है। इसके लिए न तो अतिरिक्त अधोसंरचना और न ही उत्तर पुस्तिका जांचने वाले शिक्षकों को अतिरिक्त ज्ञान देने की जरूरत है। यूनिसेफ के एक अध्ययन के मुताबिक, लगभग तीन चौथाई छात्र अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषा में प्रदत्त ज्ञान को पूर्णता के साथ नहीं समझ पाते। एक महत्वपूर्ण विषय यह भी है कि जब प्राथमिक से लेकर उच्चतर माध्यमिक शिक्षा तक मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करने के विकल्प बहुतायत में उपलब्ध हैं, तो ऐसे में चिकित्सा शिक्षा के लिए अंग्रेजी की बाध्यता कहां तक न्यायोचित है। करीब 12 वर्षों के शिक्षण काल में जिस छात्र ने अपनी मातृभाषा में ही शिक्षा ग्रहण की हो, उसके लिए यकायक दूसरी भाषा में शिक्षा ग्रहण करना एक दुष्कर कार्य होता है। बौद्धिक विकास के लिए ठोस आधार मातृभाषा के माध्यम से ही स्थापित हो पाता है, इस बाबत किए गए कई अध्ययन एकमत से शिक्षा को मातृभाषा के माध्यम से प्रदान करने की वकालत करते हैं।

चिकित्सा शिक्षा में तो यह इसलिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि विषय के मूल को स्पष्टता से समझना, प्रचलित एवं विद्यमान बीमारियों के विकल्प में से सही कारण को ढूंढ पाना आवश्यक होता है। यह तब ही संभव हो पाता है, जब मरीज व चिकित्सक के मध्य संवाद प्रभावी एवं स्पष्ट हो। इसके लिए भी माध्यम मातृभाषा ही होता है। जैसे मरीज चिकित्सक संवाद में बीमारी एवं उसके लक्षण पर चर्चा किताबी ज्ञान के अनुरूप न होकर स्थानीय संदर्भ में ही की जाती है, ताकि मरीज एवं चिकित्सक एक स्तर पर रहकर निदान की सही दिशा में अग्रसर हो सकें। उसके साथ ही दोनों के मध्य भावनात्मक जुड़ाव भी समान भाषा से ही बन पाता है। भाषा के माध्यम से ही सांस्कृतिक समझ गहरी होती है और त्रुटि या भावनात्मक आघात की गुंजाइश भी कम हो जाती है। यह उचित समय है, जब चिकित्सा शिक्षा में मातृभाषा के विकल्प के साथ अंग्रेजी के अनावश्यक बोझ को दूर कर उसके भय के कारण अंतिम छोर पर बैठे युवा को भी चिकित्सक बनने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

चिंतन

सोशल मीडिया पर नफरती बोल अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं

राजनीति के बाद अब सोशल मीडिया पर नफरती बोल सामाजिक ताने-बाने को बिगाड़ रहे हैं। सुप्रीम कोर्ट ने दो टूक नसीहत दी है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का मतलब कुछ भी बोलना नहीं है। नफरत भरे भाषण को बोलने की आजादी नहीं समझा जा सकता है। सभी नागरिकों को भाषण एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार की अहमियत समझनी चाहिए और आत्म-नियमन का पालन करना चाहिए। अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर हिंदू देवी-देवता के खिलाफ आपत्तिजनक पोस्ट करना बर्दाश्त नहीं किया जा सकता है। सोशल मीडिया पोस्ट में सांप्रदायिक टिप्पणी करना भी गलत है। उच्चतम न्यायालय ने कहा कि, 'वैसे तो कोई नहीं चाहता कि राज्य हस्तक्षेप करे, लेकिन उल्लंघन की स्थिति में सरकार कदम उठा सकती है, सोशल मीडिया पर इन सभी विभाजनकारी प्रवृतियों पर रोक लगानी होगी।' शीर्ष अदालत ने स्पष्ट किया कि 'सरकार के एक्शन का मतलब सेंसरशिप नहीं है'। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि केंद्र और राज्य सरकारें हेट स्पीच यानी नफरत फैलाने वाले भाषणों को रोकें, लेकिन इस बात का ध्यान रखें कि नागरिकों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन न हो। लोगों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को लेकर जागरूक करने की जरूरत है, ताकि सरकार को इसे नियंत्रित करने की जरूरत न पड़े। लोगों को हेट स्पीच कंटेंट को लाइक, शेयर नहीं करना चाहिए। यह पहली बार नहीं है जब सुप्रीम कोर्ट ने हेट स्पीच पर कड़ा निर्देश दिया है। वर्ष 2022 और 2023 में सुनवाई के दौरान सुप्रीम कोर्ट ने सरकार, नेताओं और मीडिया को सख्त हिदायत दी थी कि हेट स्पीच कतई स्वीकार्य नहीं है। हेट स्पीच को लेकर सुप्रीम कोर्ट ने कहा था- यह 21वीं सदी है। हम धर्म के नाम पर कहां आ पहुंचे हैं? हमें एक धर्मनिरपेक्ष और सहिष्णु समाज होना चाहिए, लेकिन आज घृणा का माहौल है। सामाजिक ताना-बाना बिखरा जा रहा है। हमने ईश्वर को कितना छोटा कर दिया है। सुप्रीम कोर्ट ने हेट स्पीच से भरे टॉक शो और रिपोर्ट टेलीकास्ट करने पर टीवी चैनलों को जमकर फटकार लगाई थी। केंद्र सरकार 5 साल के लंबे परामर्श के बाद सोशल मीडिया पर नफरत भरे कंटेंट रोकने के लिए एंटी हेटस्पीच कानून बनाने की तैयारी पिछले तीन साल से कर रही है, लेकिन अभी तक ऐसे कानून का ड्राफ्ट तक नहीं आया है। इस कानून से हेट स्पीच की परिभाषा स्पष्ट होगी, ताकि लोगों को भी यह पता रहे कि जो बात वे बोल या लिख रहे हैं, वह कानून के दायरे में आती है या नहीं। एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (एडीआर) और नेशनल इलेक्शन वॉच (एनईडब्ल्यू) के वर्ष 2023 के विश्लेषण से पता चलता है कि भारत में बड़ी संख्या में सांसदों के खिलाफ नफरत फैलाने वाले भाषण के मामले दर्ज हैं। करीब 107 सांसदों और विधायकों के खिलाफ नफरत फैलाने वाले भाषण के मामले दर्ज हैं। ऐसे निष्कर्ष सत्ता के पदों पर बैठे लोगों के बीच नैतिक आचरण की आवश्यकता को उजागर करते हैं। विधि आयोग की 267वीं रिपोर्ट में घृणास्पद भाषण को मुख्य रूप से नस्ल, जातीयता, लिंग, यौन अभिविन्यास, धार्मिक विश्वास और इसी तरह के संदर्भ में परिभाषित व्यक्तियों के एक समूह के खिलाफ नफरत को उकसाने वाला बताया गया है। हेट स्पीच के दोषियों के खिलाफ देश में पहले से ही कई कानून मौजूद हैं। जन प्रतिनिधित्व अधिनियम 1951 व नागरिक अधिकारों का संरक्षण अधिनियम, 1955 भी हैं। आज एआई के दौर में बहुत जरूरी है कि लोग सोच समझ कर बोलें, अपनी बातों से घृणा न फैलाएं। सोशल मीडिया नफरत फैलाने का मंच नहीं है।

डिजिटेक

सुनील कुमार महला

अब बुलेट इंटरनेट से स्पीड क्रांति की तैयारी में जापान

जापान, पूर्वी एशिया में स्थित एक द्वीपसमूह देश है, जो प्रशांत महासागर में स्थित है। यह देश 6,852 द्वीपों से मिलकर बना है, जिनमें होक्काइडो, होंशू, शिकोकू, क्यूशू और ओकिनावा मुख्य द्वीप हैं। अपनी शक्तिशाली अर्थव्यवस्था, उन्नत प्रौद्योगिकी व नवाचारों, दुनिया के सबसे बड़े वाहन निर्माताओं में से एक, जिसकी ट्रेनें दुनिया में सबसे सटीक समय पर चलने वाली मानी जाती हैं तथा जो अपनी अद्वितीय व अनूठी संस्कृति के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध रहा है; ऑटोमोबाइल, रोबोटिक्स, इलेक्ट्रॉनिक्स, विनिर्माण और शिक्षा के क्षेत्र में जापान आज एक वैश्विक नेता है। हाल ही में जापान के नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इंफॉर्मेशन एंड कम्युनिकेशंस टेक्नोलॉजी (एनआईसीटी) के रिसर्चर्स ने 1.02 पेटाबिट्स (पेटाबाइट) प्रति सेकेंड की अविश्वसनीय इंटरनेट स्पीड हासिल करके विश्व रिकॉर्ड स्थापित किया है, जो अपने आप में एक मिसाल है। जापान के नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ इन्फॉर्मेशन एंड कम्युनिकेशन टेक्नोलॉजी (एनआइसीटी) ने सुमितोमो इलेक्ट्रिक और यूरोपीय पार्टनर के साथ मिलकर यह रिकॉर्ड बनाने वाली उपलब्धि हासिल की है। उनके यूनिक 19 कोर ऑप्टिकल फाइबर केबल ने 1,808 किलोमीटर से ज्यादा की दमदार स्पीड से डाटा ट्रांसमिट किया, जो कि करीब लंदन से रोम की दूरी के बराबर है। एक रिपोर्ट के अनुसार, 1.02 मिलियन गीगाबाइट (जीबी) डाटा एक सेकंड में डाउनलोड किया गया है। यह स्पीड इतनी ज्यादा है कि इसके बारे में सोच पाना भी मुश्किल है। जापान की इस तकनीक को वैश्विक रूप से डाटा ट्रांसफर, स्ट्रीमिंग और कनेक्टिविटी के क्षेत्र में एक उज्जवल भविष्य के रूप में देखा जा रहा है। जापान की लेटेस्ट इंटरनेट नेटवर्क की स्पीड 1.02 पेटाबाइट पर सेकंड है। यह इंटरनेट स्पीड इतनी फास्ट है कि इसका इस्तेमाल करके कुछ ही सेकंड्स में फिल्म ही नहीं, बल्कि पूरी लाइब्रेरी तक डाउनलोड की जा सकती है। वास्तव में, जापान की यह उपलब्धि डेटा ट्रांसमिशन तकनीक में एक महत्वपूर्ण व बड़ा कदम है। जापान की यह स्पीड अमेरिका की एवरेज इंटरनेट स्पीड से 3.5 गुना है। दूसरे शब्दों में कहें तो यह स्पीड अमेरिका के औसत इंटरनेट कनेक्शन से 35 लाख गुना ज्यादा है। भारत की औसत इंटरनेट गति से यह 1.6 करोड़ गुना तेज बताई जा रही है। आज भारत जैसे देश में बफरिंग, नेटवर्क डाउन और स्लो इंटरनेट एक बड़ी समस्या है, ऐसे में जापान द्वारा हाई स्पीड इंटरनेट तकनीक का विकास आने वाले समय में 6जी नेटवर्क, क्लाउड सिस्टम्स, अंडरसी डेटा केबल्स और एआई जैसे उभरते क्षेत्रों में नई क्रांति लेकर आएगा। बहरहाल, पाठकों को बताता चलूं कि जापान ने सिंगल कोर के बजाय 19 कोर ऑप्टिकल फाइबर सिस्टम व उन्नत एम्प्लीफायर तकनीक की मदद से इतनी तेज इंटरनेट स्पीड को हासिल करने में सफलता मिली है। जानकारी के अनुसार इन स्पेशल केबल का इस्तेमाल कर शोधकर्ताओं की टीम ने बिना किसी स्पीड लॉस के 1800 किलोमीटर से भी अधिक की दूरी तक भारी मात्रा में डेटा भेजने में सक्षम रही है। उन्होंने ट्रांसमीटर, रिसीवर और लूपिंग सर्किट के सेटअप का उपयोग किया जिससे डेटा फुल पॉवर से फ्लो रखने में मदद मिली। इस ऐतिहासिक उपलब्धि का अर्थ है कि एक सेकंड में 10,000 से अधिक 4K फिल्में डाउनलोड की जा सकती हैं। मार्च 2024 में भी जापान ने ही 402 टेराबिट्स प्रति सेकंड (यानी 50,250 जीबीपीएस) की स्पीड का रिकॉर्ड बनाया था, लेकिन इस बार नई तकनीक ने इस आंकड़े को दोगुना से अधिक कर दिया। जैसे-जैसे एआई, 8K स्ट्रीमिंग, क्लाउड गेमिंग और ऑगमेंटेड रियलिटी जैसे सेक्टर आगे बढ़ेंगे, ऐसे ब्रेकथ्रू तकनीकों की जरूरत और भी बढ़ेगी। वास्तव में यह तकनीक कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई), इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आइओटी) और वैश्विक डिजिटलीकरण की बढ़ती मांगों को पूरा करने में मदद करेगी। ज्यादा तेज इंटरनेट, ज्यादा तेज विकास भी लेकर आएगा। स्मार्ट सिटी, रिमोट हेल्थ केयर और ऑनलाइन शिक्षा जैसे क्षेत्रों में बड़ा बदलाव देखने को मिलेगा। बता दें कि इंटरनेट की स्पीड के मामले में भारत टॉप-10 के देशों में भी शामिल नहीं है। इस डिजिटल युग में, इंटरनेट लगभग सभी के लिए एक बुनियादी जरूरत बन गया है। उत्पादकता बढ़ाने के अलावा, हाई-स्पीड इंटरनेट नेटवर्क विभिन्न क्षेत्रों में नवाचार विकास को भी बढ़ावा देते हैं। हमें जरूरत इस बात की है कि हम वैश्विक सहयोग को मजबूत करें, ताकि हम भी जापान जैसी तकनीकी क्रांति का हिस्सा बन सकें और अपने देश को लगातार ऊंचाइयों व उन्नयन की ओर अग्रसर कर सकें।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार व साहित्यकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

विश्लेषण

राव इन्द्रजीत सिंह

मानव संसाधन में निवेश की क्रांति

> मानव पूंजी अर्थात हमारी शिक्षा, कौशल, स्वास्थ्य और उत्पादकता सिर्फ एक आर्थिक संपत्ति नहीं है, बल्कि एक नैतिक अनिवार्यता भी है। पिछले दस वर्षों में, भारत के प्रमुख नीति थिंक टैंक, नीति आयोग के नेतृत्व में एक शांत लेकिन जबरदस्त क्रांति ने आकार लिया है, जिसने देश के सबसे मूल्यवान संसाधनः अपने नागरिकों में निवेश करने के तरीके को एक नया रूप दिया है। नीति आयोग ने विकास के बारे में चर्चा को आगे बढ़ाया है, हमें याद दिलाया है कि सच्ची प्रगति को सबसे ऊंची इमारतों या सबसे बड़ी फैक्ट्रियों से नहीं मापा जाता है, बल्कि लोगों की ताकत, स्वास्थ्य और गरिमा से मापा जाता है। यह एक युवा, महत्वाकांक्षी भारत की नब्ज बन गया है।

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में, प्रगति का सही मापदंड सिर्फ़ जीडीपी के आंकड़ों या बुनियादी ढांचे की उपलब्धियों में नहीं है, बल्कि इस बात में है कि कोई राष्ट्र अपने लोगों का कितने अच्छे तरीके से पोषण करता है। मानव पूंजी अर्थात हमारी शिक्षा, कौशल, स्वास्थ्य और उत्पादकता सिर्फ़ एक आर्थिक संपत्ति नहीं है, बल्कि एक नैतिक अनिवार्यता भी है। पिछले दस वर्षों में, भारत के प्रमुख नीति थिंक टैंक, नीति आयोग के नेतृत्व में एक शांत लेकिन जबरदस्त क्रांति ने आकार लिया है, जिसने देश के सबसे मूल्यवान संसाधनः अपने नागरिकों में निवेश करने के तरीके को एक नया रूप दिया है।

एक ऐसे देश में जहां 65% से ज्यादा आबादी 35 वर्ष से कम उम्र की है, जनसांख्यिकी लाभांश एक पीढ़ी में एक बार मिलने वाला अवसर है। इस युवा आबादी का विशाल आकार बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी लेकर आता है। चुनौती युवा ऊर्जा को आर्थिक वृद्धि और राष्ट्रीय विकास के लिए एक कारक में बदलने की है। यहीं पर नीति आयोग एक दूरदर्शी उत्प्रेरक के रूप में उभरा है - जो न केवल आज की प्रगति के लिए बल्कि कल की समृद्धि के लिए भी एक रोडमैप तैयार कर रहा है। पिछले दशक में, नीति आयोग एक थिंक टैंक से एक सुधारवादी इंजन और क्रियान्वयन भागीदार के रूप में उभरा है, जो डेटा, सहयोग और मानव-केंद्रित डिजाइन से समर्थित साहसिक विचारों के लिए जाना जाता है। इसने नीति निर्माण को शीर्ष-स्तरीय अभ्यास से राज्यों, निजी भागीदारों, वैश्विक संस्थानों और नागरिक समाज के साथ सह-निर्माण की एक गतिशील प्रक्रिया में बदल दिया है। इसकी ताकत सिर्फ योजना बनाने में नहीं है, बल्कि सुनने में है और उन अंतर्दृष्टि को कार्रवाई में बदलने में है। शिक्षा, जो मानव पूंजी का आधार है, इसके मार्गदर्शन में पूरी तरह से पुनः कल्पना की साक्षी रही है।

यह मानते हुए कि केवल अधिगम ही पर्याप्त नहीं है, नीति आयोग ने गुणवत्ता और समानता पर जोर दिया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, जहां इसने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, ने एक नए युग की शुरुआत की, रटने की शिक्षा से आलोचनात्मक सोच, लचीलेपन और व्यावसायिक एकीकरण की ओर बदलाव। इसने प्रारंभिक बाल्य शिक्षा, मातृभाषा में शिक्षा और विषयों के बीच निर्बाध पारगमन पर जोर दिया। अटल नवाचार मिशन जैसी पहलों के माध्यम से, इसने जवाबदेही और कल्पनाशक्ति अर्थात दोनों को सुनिश्चित किया। 10 हजार से अधिक अटल टिंकरिंग लैब्स में नवाचार को शामिल किया जो अब पूरे देश भर में फैले हुए हैं। 21वीं सदी के लिए भारत के युवाओं को कौशल प्रदान करना इसके मिशन की एक और आधारशिला रही है। कौशल भारत मिशन को समर्थन प्रदान करने से लेकर आकांक्षी जिला कार्यक्रम के माध्यम से वंचित जिलों के केंद्र तक व्यावसायिक कार्यक्रमों को पहुंचाने तक, नीति आयोग ने क्लास रूम और आजीविका के बीच की खाई को पाटने में मदद की है। स्किल इंडिया मिशन के तहत प्रौद्योगिकी, उद्योग संबंधों और मांग-संचालित पाठ्यक्रम को मिलाकर तैयार की गई पहलों के माध्यम से 1.5 करोड़ से अधिक युवाओं को प्रशिक्षित किया गया है। यह केवल प्रशिक्षण के प्रयोजन से नहीं था बल्कि इसने क्षेत्रीय जरूरतों और डिज़ाइन किए गए कार्यक्रमों का मानचित्रण

किया जिसने भारत के ग्रामीण और शहरी युवाओं के लिए समान रूप से वास्तविक आर्थिक अवसर खोले हैं। इसने 44 केंद्रीय श्रम कानूनों को चार सरलीकृत संहिताओं - मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा, औद्योगिक संबंधों और व्यावसायिक सुरक्षा को तर्कसंगत बनाने का समर्थन किया। इन सुधारों ने श्रमिकों की सुरक्षा के साथ नियोक्ता अनुकूलन को संतुलित किया। अनुपालन को सरल बनाकर और औपचारिकता को प्रोत्साहित करके, कार्यस्थल न केवल अधिक उत्पादक बल्कि अधिक मानवीय भी बन गया। स

वास्थ्य सेवा, जिसे प्रायः लागत के रूप में देखा जाता है, को पुनः निवेश के रूप में तैयार किया गया। नीति आयोग द्वारा समर्थित और निगरानी की गई प्रमुख आयुष्मान भारत योजना ने 50 करोड़ से अधिक भारतीयों को स्वास्थ्य बीमा प्रदान किया, जबकि 1.5 लाख से अधिक स्वास्थ्य और कल्याण केंद्रों ने जमीनी स्तर पर प्राथमिक देखभाल की। इन कार्यक्रमों ने पोषण, मातृ और बाल स्वास्थ्य, मानसिक चिकित्सा और गैर-संचारी रोगों को न केवल उपचार करने के लिए, बल्कि लोगों को स्वस्थ रखने के लिए लक्षित किया। नीति आयोग उद्यमिता और नवाचार के लिए एक प्रकाश स्तंभ साबित हुआ है। स्टार्ट-अप इंडिया, स्टैंड-अप इंडिया और अटल नवाचार मिशन जैसे कार्यक्रमों ने विचारों के फलने-फूलने के लिए एक उर्वर ईकोसिस्टम का निर्माण किया। आज हजारों स्टार्ट-अप्स फिनटेक, एजटेक, एग्रीटेक, हेल्थ-टेक और स्वच्छ ऊर्जा में सफल हो रहे हैं क्योंकि उन्हें नीतिगत समर्थन, इंक्यूबेशन और महत्वपूर्ण चरणों पर मार्गदर्शन मिला। ये केवल व्यवसाय नहीं हैं; ये नौकरी पैदा करने वाले और समस्याओं को हल करने वाले हैं, जो एक मजबूत और आत्मनिर्भर भारत में योगदान दे रहे हैं। इसकी सबसे बड़ी उपलब्धि इस बात में निहित है कि इसने साक्ष्य आधारित नीति निर्माण की परम्परा को संस्थागत बनाया है।

बड़े डेटा, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, रियल-टाइम डैशबोर्ड और कठोर निगरानी ढांचे का लाभ उठाकर, इसने सुनिश्चित किया कि नीतियां अनुकूलित, जवाबदेह और वास्तविकता के अनुसार हों। चाहे यह भारत का पहला एसडीजी इंडेक्स लॉन्च करना हो, राज्यों के प्रदर्शन मैट्रिक्स पर मार्गदर्शन करना हो, या नीतिगत डिजाइन के लिए व्यवहार संबंधी अंतर्दृष्टियों का उपयोग करना हो, नीति आयोग ने शासन के केंद्र में वैज्ञानिक सोच स्थापित करने का काम किया है। मंत्रालयों और क्षेत्रों में समन्वय स्थापित करने की इसकी क्षमता ने इसे एक सलाहकार निकाय से कहीं अधिक बना दिया है। न केवल लक्ष्य प्राप्त करने से कहीं अधिक, नीति आयोग ने ऐसी प्रणालियां बनाने पर ध्यान केंद्रित किया है जो टिकाऊ, समावेशी और भविष्य के लिए तैयार हों।

सतत विकास लक्ष्यों के प्रति इसकी प्रतिबद्धता हर पहल में स्पष्ट है - स्वच्छ ऊर्जा संक्रमण से लेकर हरित गतिशीलता तक, डिजिटल सार्वजनिक अवसंरचना से लेकर कार्यस्थलों में लैंगिक समानता तक। ज्ञान अर्थव्यवस्था के रूप में भारत का उदय अब कोई दूर का सपना नहीं है। यह कार्य प्रगति पर है, जो लोगों को देश की सबसे बड़ी संपत्ति के रूप में देखने वाली नीतियों द्वारा प्रेरित है। नीति आयोग ने विकास के बारे में चर्चा को आगे बढ़ाया है, हमें याद दिलाया है कि सच्ची प्रगति को सबसे ऊंची इमारतों या सबसे बड़ी फैक्ट्रियों से नहीं मापा जाता है, बल्कि लोगों की ताकत, स्वास्थ्य और गरिमा से मापा जाता है। यह एक युवा, महत्वाकांक्षी भारत की नब्ज बन गया है, एक ऐसा भारत जो सपने देखता है, हिम्मत करता है और कार्य को सम्पूर्ण करता है। यह शांत विश्वास है कि जब आप लोगों में निवेश करते हैं, तो आप न केवल एक बेहतर अर्थव्यवस्था बनाते हैं, बल्कि एक बेहतर राष्ट्र भी बनाते हैं।

(लेखक राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार) योजना मंत्रालय हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)
लेख पर अपनी प्रतिक्रिया edit@haribhoomi.com पर दे सकते हैं।

हमारा वास्तविक स्वभाव क्या है?

संकलित

दर्शन

जीवन क्या है? इसका उद्देश्य क्या है? ये प्रश्न जितने सरल लगते हैं, उतने ही रहस्यमय भी हैं। इन्हें जितना समझने की कोशिश करते हैं, वे उतने ही उलझते जाते हैं। दरअसल, जानना हृदय का विषय नहीं है, जीना हृदय का विषय है। रहस्य समझने के लिए नहीं, बल्कि जीने के लिए हैं। जीवन के रहस्य को जीना ही आनंद है। ज्ञान प्राप्त होने से पहले लगता है कि हममें अज्ञान नहीं है। लेकिन जैसे-जैसे ज्ञान बढ़ता है, तो लगता है हममें काफी अज्ञान है। एक कहावत है, आत्मज्ञान होने से पहले लकड़ी काटो और पानी भर कर लाओ। आत्मज्ञान के बाद भी, लकड़ी काटो और पानी भर कर लाओ। अंतर इतना है कि पहले हम दुखी रहकर काम करते थे। लेकिन आत्मज्ञान के बाद वही कार्य आनंद से करते हैं। हमारा जीवन कितना उत्तम है, यह हमारे मन की अवस्था पर निर्भर करता है। हम वही सुनना पसंद करते हैं, जिसमें हमारी रुचि होती है। जब हमारा जीवन प्रेम में केंद्रित होता है, तो हम प्रेम के बारे में जानना चाहते हैं। जब जीवन बच्चों के इर्द-गिर्द घूमता है, तो हम बच्चों के बारे में ही सुनना चाहते हैं। जो हमारी इच्छा हो, हमें वही सुनना पसंद है और हमारी इच्छाओं का कभी अंत ही नहीं होता।

-श्री श्री रविशंकर

संतान गुस्सा हो तो शांत करने की कोशिश जरूर करें

संकलित

प्रेरणा

पुराने समय में एक दिन शिव जी और पार्वती जी ने विचार किया कि अब गणेश और कार्तिकेय का विवाह कर देना चाहिए। ये विचार करने के बाद उन्होंने कार्तिकेय स्वामी और गणेश जी को बुलाया और दोनों से कहा कि आप दोनों में से जो इस संसार की परिक्रमा करके पहले आएगा, हम उसका विवाह पहले कराएंगे। कार्तिकेय स्वामी तो अपने वाहन मोर पर बैठकर तुरंत उड़ गए, लेकिन गणेश जी अपने वाहन चूहे पर बैठे हुए थे। गणेश जी ने ने तुरंत ही माता-पिता की परिक्रमा कर ली और कह दिया कि आप दोनों ही मेरे लिए संसार हैं। दूसरी ओर, कार्तिकेय स्वामी को संसार की परिक्रमा करके लौटने में थोड़ा समय लग गया। जब कार्तिकेय स्वामी परिक्रमा करके लौटे तो उन्होंने देखा कि गणेश का विवाह हो गया है। गणेश जी को विवाहित देखकर कार्तिकेय स्वामी नाराज हो गए। उन्होंने शिव-पार्वती से कहा कि आपने ये सही नहीं किया है। क्रोधित होकर कार्तिकेय स्वामी क्रौंच पर्वत पर चले गए। ये क्रौंच पर्वत आज दक्षिण भारत में कृष्णा जिले में कृष्णा नदी के तट पर स्थित है। इसे श्रीपर्वत भी कहते हैं। शिव जी और देवी पार्वती ने कार्तिकेय स्वामी को समझाने की बहुत कोशिशें कीं, लेकिन कार्तिकेय शांत नहीं हुए। शिव-पार्वती समझ गए कि कार्तिकेय बहुत ज्यादा गुस्से में है और ये वापस भी नहीं आएगा। तब दोनों ने तय कि वे ही कार्तिकेय से मिलने जाते रहेंगे। इसके बाद हर अमावस्या पर शिव जी और पूर्णिमा पर देवी पार्वती कार्तिकेय से मिलने श्रीपर्वत पर आती हैं। ऐसी मान्यता है।

अंतर्मन

आज की पाती

क्रोध में की गई नासमझी महंगी पड़ती है

हम अपने को हर परिस्थिति मे संयमित रख सकते है तो बड़ी बात है। उसे ही शिक्षित कह सकते है। इसके विपरीत अगर मन मे उठने वाली उत्तेजनाओं और आवेगों पर हम कंट्रोल नही कर सकते है तो यह असंयमित जीवन है। आवेगों को नही रोक पाना नासमझी है। आवेग मे आदमी इतना उत्तेजित हो जाता है कि अपना आपा खो देता है। आवेग मे परिवार उजड़ते जा रहे है। उसके बाद मे पश्चाताप से कोई फायदा नहीं है। आत्महत्या के कारणों के पीछे भी लोगों की नासमझी ही है। इस तरह की मानसिकता वालो के लिए हर तरह की शिक्षा व्यर्थ है। कोई भी किसी भी कार्य मे आदमी सफल नही हो सकता है जब तक वह अपना स्वामी स्वयं नही है। आत्मसंयम के अभाव मे हजारों लोगो का जीवन नष्ट हो जाता है। उनकी अनेक उपलब्धियां इसलिए व्यर्थ हो गई कि उनमे अपने आपको वश मे रखने की क्षमता नहीं थी।

-कांतिलाल मांडोत, सूरत

ट्रेंड

सुरक्षा के कदम

सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए रेलवे का बड़ा कदम। देशभर के 74000 कोच और 15000 इंजनों में हाई-टेक सीसीटीवी कैमरे लगेंगे। यह पहल अपराध पर निगरानी, महिला सुरक्षा के लिए कारगर सिद्ध होगी।
-अन्नपूर्णा देवी, महिला एवं बाल विकास मंत्री

भारत का समर्थन

बीजिंग पहुँचने पर उपराष्ट्रपति हान झेंग से मिलकर मुझे खुशी हुई। चीन की एससीओ अध्यक्षता के लिए भारत का समर्थन व्यक्त किया। हमारे द्विपक्षीय संबंधों में सुधार पर ध्यान दिया। विश्वास व्यक्त किया कि चर्चाएँ इसी सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ेंगी।
-एस जयशंकर, विदेश मंत्री

किसानों की खुशहाली

प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में पिछले 11 वर्षों में अन्नदाता किसानों की खुशहाली के लिए जो कदम बढ़ाए गए हैं, वह अत्यंत महत्वपूर्ण एवं सराहनीय हैं। आज उसी का परिणाम है कि डबल इंजन सरकार की ऊर्जा का लाभ उत्तर प्रदेश ले रहा है।
-योगी आदित्यनाथ, सीएम, उप्र

कांवड़ यात्रा की आस्था

कांवड़ यात्रा आस्था का वह पावन संगम है, जो दिल्ली की सड़कों को तीर्थ बना देता है। यह परंपरा हमारे जीवंत सांस्कृतिक संस्कारों की प्रतीक है। इस यात्रा को सहज, सुलभ, सम्मानजनक और भव्य बनाने का अवसर हमें प्राप्त हो रहा है। यह हमारी संस्कृति की सेवा है और सेवा ही हमारा पुण्य है।
-रेखा गुप्ता, सीएम, दिल्ली

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से **hbcgpati@gmail.com** पर भेज सकते हैं।

करंट अफेयर

ऑस्ट्रेलिया में अब तक का सबसे बड़ा सैन्य अभ्यास

ऑस्ट्रेलिया में अब तक का सबसे बड़ा युद्ध अभ्यास 'टैलिसमैन सेबर' शुरू हो चुका है। इस सैन्य अभ्यास के दौरान चीनी जासूसी जहाजों द्वारा निगरानी किए जाने की संभावना जताई जा रही है। 'टैलिसमैन सेबर' अभ्यास की शुरुआत 2005 में अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया के बीच एक द्विवार्षिक संयुक्त सैन्य अभ्यास के रूप में हुई थी। ऑस्ट्रेलिया के रक्षा विभाग ने रविवार को बताया कि इस वर्ष यह अभ्यास पहले से कहीं अधिक व्यापक होगा, जिसमें 19 देशों के 35,000 से अधिक सैन्यकर्मी भाग ले रहे हैं और यह अभ्यास तीन सप्ताह तक चलेगा। इन देशों में कनाडा, फिजी, फ्रांस, जर्मनी, भारत, इंडोनेशिया, जापान, नीदरलैंड, न्यूजीलैंड, नॉर्वे, पापुआ न्यू गिनी, फिलीपीन, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर, थाईलैंड, टोंगा और ब्रिटेन शामिल हैं। मलेशिया और वियतनाम भी इस अभ्यास में पर्यवेक्षक के रूप में भाग ले रहे हैं। यह अभ्यास ऑस्ट्रेलिया के निकटतम पड़ोसी देश पापुआ न्यू गिनी में भी आयोजित किया जाएगा। और यह पहली बार है जब 'टैलिसमैन सेबर' का आयोजन ऑस्ट्रेलिया के बाहर होगा। ऑस्ट्रेलिया के रक्षा उद्योग मंत्री पैट कॉनरॉय ने कहा कि पिछले चार 'टैलिसमैन सेबर' अभ्यासों के दौरान चीनी निगरानी जहाजों ने ऑस्ट्रेलियाई तट के पास नौसैनिक अभ्यासों पर नजर रखी है।

ऑफ बीट

शराब से दूरी : केवल एक दिन के परहेज़ से भी होता है फायदा

शराब का हमारे स्वास्थ्य पर कई तरह से नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और इनमें से कुछ दुष्प्रभाव तो हैरान कर देने वाले भी हो सकते हैं। इनमें सिरदर्द, चिंता जैसे तात्कालिक प्रभावों से लेकर कैंसर जैसी गंभीर दीर्घकालिक बीमारियां शामिल हैं। शरीर से शराब को पूरी तरह बाहर निकलने में लगभग 24 घंटे लगते हैं। इसके बाद से ही आपको कुछ सुधार महसूस होता है। शराब पीने से बार-बार पेशाब आता है और शरीर में पानी की कमी हो जाती है। लेकिन एक गिलास पानी तुरंत असर करता है, जिससे पाचन, मस्तिष्क कार्य और ऊर्जा स्तर बेहतर होने लगता है। शराब के कारण यकृत रक्त शर्करा को नियंत्रित नहीं कर पाता। जैसे ही शराब शरीर से बाहर निकलती है, ब्लड शुगर सामान्य होने लगता है। रोज शराब पीने वालों को शुरुआत में पसीना आना, मूड में बदलाव, नींद में गड़बड़ी या कंपकंपी जैसी समस्याएं हो सकती हैं, जो आमतौर पर एक सप्ताह में ठीक हो जाती हैं। शराब भले ही शुरुआत में नींद लाती है, लेकिन यह नींद को धीरे धीरे खत्म कर देती है। एक हफ्ते के अंदर आप सुबह ज्यादा तरोताजा महसूस कर सकते हैं। यकृत शराब को डिटॉक्स करने वाला मुख्य अंग है जो हल्की क्षति को जल्दी ठीक कर सकता है। शराब पीना बंद करने से केवल सात दिनों में यकृत की चर्बी कम हो सकती है।

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । मंगलवार, 15 जुलाई 2025

सवालों भरी रिपोर्ट

किसी भी जांच का मकसद होता है सच्चाई को सामने लाना या कम से कम उसमें मदद करना। लेकिन, अहमदाबाद में एयर इंडिया के प्लेन क्रैश की प्रारंभिक जांच रिपोर्ट किसी मकसद तक पहुंचती नहीं दिखती। हां, इसकी वजह से एक दूसरी बहस जरूर शुरू हो गई है, जिससे जांच के भटकने का डर है।

दो वाक्य । एयरक्राफ्ट एक्सीडेंट इन्वेस्टिगेशन ब्यूरो (AAIB) को 30 दिनों के भीतर अपनी रिपोर्ट देनी थी और उसने दे दी, लेकिन कई सवालों के साथ। रिपोर्ट का पूरा फोकस इस बात पर आ टिका है कि टेकऑफ के तुरंत बाद फ्यूल कंट्रोल स्विच कटऑफ कर दिया गया था। कॉकपिट के भीतर के दो वाक्य सार्वजनिक किए गए हैं, जिनमें एक पायलट दूसरे से पूछता है कि क्या उसने स्विच ऑफ किया और फिर दूसरा नहीं में जवाब देता है। AAIB की यह प्रारंभिक रिपोर्ट है, लेकिन इन दो वाक्यों को इस तरह पेश किया जा रहा, जैसे जांच पूरी हो चुकी है।

जांच की अधूरी तस्वीर

कयासबाजी का मौका । रिपोर्ट पूरी बात नहीं बताती और न ही सारे सवालों के जवाब देती है, इसी वजह से लोगों को सवाल उठाने का भी मौका मिल रहा है। अभी पायलटों को लेकर जो कयासबाजी चल रही है कि उनमें से ही किसी ने फ्यूल स्विच ऑफ किया होगा, वह रिपोर्ट की इसी कमी का नतीजा है। ऐसा लग रहा है कि 260 मौतों की पूरी जिम्मेदारी पायलटों पर डालने की कोशिश की जा रही है।

अंतिम रिपोर्ट नहीं । अमेरिका में दिसंबर 1944 में हुए शिकागो कन्वेंशन से ही इंटरनैशनल सिविल एविएशन ऑर्गनाइजेशन (ICAO) की नींव पड़ी। संस्था के नियमों में यह भी है कि विमान हादसों की जांच कैसे आगे बढ़ेगी। इसके मुताबिक, प्रारंभिक जांच प्रारंभिक ही होती है, अंतिम नहीं। इससे केवल घटनाक्रम का पता चलता है, हादसे की वजह का नहीं। लेकिन, एयर इंडिया 171 क्रैश मामले में प्रारंभिक को ही अंतिम की तरह पेश किया जा रहा है। एयर इंडिया के सीईओ Campbell Wilson ने तो इसके आधार पर खुद ही कंपनी को क्लीनचिट भी दे दी कि मैकेनिकल या मेंटीनेंस का इशू नहीं था।

बोइंग बरी नहीं । अहमदाबाद में क्रैश हुआ विमान बोइंग का ड्रीमलाइनर था। इस कंपनी के साथ विवाद जुड़े रहे हैं। अमेरिकी विमान नियामक FAA ने 2018 में चेतावनी दी थी कि कंपनी के कुछ विमानों में लगाए गए फ्यूल स्विच में लॉकिंग फीचर नहीं था। मई 2021 में क्वॉलिटी कंट्रोल से जुड़े सवाल भी उठे थे। इन तथ्यों की गंभीरता को भी इस मामले में नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

धूप-छांव

इसे क्यों चुना

प्रणव प्रियदर्शी

'साथ रहना अलग बात है यार। साथ रहने का मतलब दोस्त हो जाना नहीं होता। मैं चौबीसों घंटे किसी के साथ रहते हुए भी उसके प्रति मन से बिल्कुल उदासीन रह सकता हूं। यहां, तुम्हारे साथ बिताए इस एक महीने की बड़ी बात यह है कि तुमसे दोस्ती हो गई है...।'

करीब तीन दशक पहले हुई इस बातचीत ने पहली बार मुझे साथ रहने और दोस्त बनने का फर्क समझाया था। दिल्ली में प्रशिक्षण का एक राउंड पूरा करके हम एक साथ पटना पहुंचे थे, इंटर्नशिप के लिए। फर्क यह था कि वह जीवन में पहली बार पटना आया था, जबकि मैं वहीं पैदा हुआ, पला-बढ़ा था। ऊपर छत वाले कमरे में मेरे साथ ही उसके रहने की व्यवस्था हो गई। हम साथ उठते, साथ खाते-पीते, साथ ही दफ्तर जाते और फिर एक ही साथ घर लौटते। यानी लगभग पूरे समय हम साथ ही होते। जाहिर है, उसका साथ मुझे भी पसंद था, तभी तो दुनिया भर के विषयों पर उससे बात करते हुए भी मैंने कभी बोरियत नहीं महसूस की।

उसी दौरान एक दिन, उसका एक परिचित युवक मिला। उसने चेहरे पर आत्मविश्वास का अतिरिक्त डोज धारण करते हुए मेरे सामने ही इसे सूचना दी, 'सब कुछ तय हो गया है। अगले महीने मैं अमुक से शादी कर रहा हूं।' वह परिचित भी जानता था कि अमुक लड़की इसे बहुत पसंद है। सूचना देकर वह कुछ सेकंड बाद ही वहां से निकल गया। मानो सूचना से इसे हतप्रभ कर देना ही उसका मकसद रहा हो। यह अवाक सा थोड़ी देर वहीं खड़ा रहा। मैंने बात संभालने की कोशिश की, 'छोड़ो यार, क्या जरूरी है कि इसका दावा सही हो। और मान लो यह सही कह रहा है, तो इसके जैसा कोई भी लड़का उसे इंप्रेस करने की कोशिश करता है और वह लड़की इंप्रेस हो जाती है तो इसका मतलब वह तुम्हारे लायक ही नहीं है।' दोस्त को दिलासा देने की बचकानी सी कोशिश थी।

पर मेरी बातों से अप्रभावित-सा वह कह रहा था, 'मुझे बुरा यह नहीं लग रहा कि उस लड़की ने मुझे रिजेक्ट कर दिया। बुरा यह लग रहा है कि इसे चुना। इसके शब्दों पर ध्यान दो। इसने यह नहीं कहा कि अगले महीने हम दोनों शादी कर रहे हैं। इसने कहा, मैं शादी कर रहा हूं उससे... जो अभी फैसले में उसकी भागीदारी को महत्व नहीं दे रहा, वह रिश्तों में बराबरी को क्या समझेगा।'

बोल वचन

बान की कमान

राहुल पाण्डेय

एक सिर्फ कमान ही नहीं होती जो बान छोड़ती है। गोरी के नैन घाव करने वाले तिरछे बान छोड़ते हैं। लोक में जब संस्कृत का बाण आता है तो अपभ्रंश होकर बान बन जाता है। फिर शुरू होती है इसके अर्थों की व्यापकता। मसलन, अवधी में बान तीर तो है ही, खटिया बीनने वाली रस्सी भी है। कन्नौजी में बान लोहे के दो-तीन फीट लंबे टुकड़े के साथ आदत तो होता ही है, एक तरह की आतिशबाजी भी है। कुमाउंनी में यह पानी की गूल है, जो नदी बांध कर बने कृत्रिम जलाशय से खेतों को सींचने या पनचक्की चलाने के काम में आती है। गढ़वाली में यह आदत के अलावा दुबला-पतला भी होता है। बेटा दिल्ली से कमाकर पौढ़ी पहुंचता है तो मां कहती है- क्य बाण बण्यूं च! यानी कितना कमजोर हो गया है! बघेली में यह गोत्र होता है तो बुंदेली में बांस के ऊपर का कड़ा छिलका। ब्रज में यह कांति, रंग, रचना, सजधज, बनावट के अलावा रुई धुनने का गोल सिरे वाला लकड़ी का डंडा भी होता है। यही बान उर्दू के शब्दों से जुड़कर बर्तन का अर्थ अख्तियार करता है, मसलन मर्तबान। मगही में यह ऐसा धान है जो एक साथ रोपा जाता है। मैथिली में यह बिनाई है तो लुत्त भी है। वहीं मालवी में यह विवाह में दूल्हे-दुल्हन को मिलने वाली भेंट है। जाहिर है, बान के इतने अर्थों को किसी एक शब्द में समेटने के लिए इंग्लिश को अपने arrow को अभी कुछ और पैना करना पड़ेगा।

AI Image

बिहार में चुनाव आयोग के अभियान से दलित और ग़रीब आबादी सबसे ज़्यादा प्रभावित

मिथिलेश जैसों की मुश्किल कैसे हल होगी

प्रियरंजन भारती

मिथिलेश कुमार दवा दुकान पर काम करते हैं। रहने वाले पटना के राघोपुर के हैं, लेकिन रोजगार की तलाश ने उन्हें कटिहार पहुंचा दिया है। गांव की वोटर लिस्ट में उनका नाम दर्ज है, लेकिन उनके पास आवासीय या जन्म प्रमाणपत्र नहीं। मैट्रिक पास होते तो डिग्री की कॉपी लगा देते, लेकिन फेल हैं। डॉक्युमेंट बनवाने के लिए उन्हें दुकान से दो-तीन दिन की छुट्टी मिल सकती है, लेकिन अभी सरकारी विभागों में जो भीड़ उमड़ी है, उसे देखते हुए मिथिलेश का काम शायद ही हो पाए। एक और समस्या है, दलालों की। बिना सुविधा शुल्क दिए प्रमाणपत्र जल्दी नहीं बन रहा। मिथिलेश के पास न पैसा है और न समय। उनके पास आधार कार्ड है, लेकिन वह चुनाव आयोग के लिए मान्य नहीं।

गड़बड़ियों की भरमार । Special Intensive Revision यानी SIR से गुजर रहे बिहार में यह समस्या आम है। डॉक्युमेंट बनवाने और ठीक कराने के लिए लोग परेशान हैं। मधेपुरा की जलाल पट्टी में रहने वाली अभिलाषा के वोटर कार्ड पर सीएम नीतीश कुमार की तस्वीर लगी है। उनके पति चंदन कुमार का आरोप है कि उन्होंने जब इसकी शिकायत BLO से की, तो उसने कोई हल सुझाने के बजाय गड़बड़ी को छिपाने की नसीहत दे डाली।

SIR से समस्या
- दस्तावेज जुटाने में आ रही मुश्किल
- सरकारी ऑफिसों में लगी लंबी लाइन
- घुसपैठियों के नाम हटाना भी मकसद

संशय में वोटर्स । बिहार में इस साल के आखिर तक विधानसभा चुनाव होना है। इसके पहले चुनाव आयोग के अभियान ने वोटर्स को संशय में डाल दिया है। अभियान की वजह से दो करोड़ से अधिक लोग सीधे तौर पर प्रभावित हो रहे हैं।

आयोग का आदेश । चुनाव आयोग के मुताबिक, बिहार के 7.90 करोड़ मतदाताओं में से 4.96 करोड़ के नाम 2003 की वोटर लिस्ट में शामिल हैं। इन्हें सिर्फ फॉर्म भरना है और कोई डॉक्युमेंट देने की जरूरत नहीं। बाकी बचे 2.94 करोड़ लोग। इनमें से जिनके माता-पिता का नाम 2003 की वोटर लिस्ट में हैं, उन्हें भी अलग से दस्तावेज नहीं देना। लेकिन, जिनके माता-पिता के या उनके खुद के नाम 22 साल पहले की उस लिस्ट में नहीं, उन्हें फॉर्म के साथ डॉक्युमेंट भी देना होगा।

मान्य डॉक्युमेंट्स । चुनाव आयोग ने 11 डॉक्युमेंट की लिस्ट जारी की है, जिसमें से कोई एक देना है - जन्म प्रमाणपत्र, एजुकेशन सर्टिफिकेट, पासपोर्ट, निवासी प्रमाणपत्र, जाति प्रमाणपत्र, वन अधिकार प्रमाणपत्र, सरकारी कर्मचारी या पेंशनभोगी पहचानपत्र, बैंक/डाकघर आदि से जारी प्रमाणपत्र, NRC (बिहार में लागू नहीं), सेवा पहचानपत्र, जमीन या घर की रजिस्ट्री।

विपक्ष की मांग । इस लिस्ट में आधार कार्ड, राशन कार्ड और मनरेगा जॉब कार्ड नहीं है। जनता की परेशानी का हवाला देते हुए विपक्ष की पार्टियां इन्हें भी शामिल करने की मांग कर रही हैं।

फर्जी वोटर । चुनाव आयोग का कहना है कि इस पूरे अभियान का मकसद फर्जी आधार, मनरेगा जॉब कार्ड वगैरह के जरिए वोटर लिस्ट में शामिल अवैध प्रवासियों के नाम हटाना है। बीते बरसों में बड़ी संख्या में बाहरी लोग राज्य में आए और गलत तरीके से वोटर बन बैठे।

घुसपैठियों की समस्या । बिहार के उपमुख्यमंत्री सम्राट चौधरी कहते हैं, राज्य के सीमावर्ती क्षेत्रों में बांग्लादेशी और रोहिंग्या घुसपैठियों की बड़ी संख्या आ बसी है। फर्जी आधार और राशन कार्ड के जरिए स्थायी निवासी प्रमाणपत्र बनवाने की कोशिश की जाती है ताकि वोटर बन सकें। केंद्रीय खाद्य मंत्रालय की नवंबर 2024 की रिपोर्ट के मुताबिक, पीएम गरीब कल्याण अन्न योजना के 80 करोड़ लाभार्थियों में से करीब 6 करोड़ के पास फर्जी राशन कार्ड थे, जिन्हें रद्द कर दिया गया है।

क्या है गाइडलाइन। पटना हाईकोर्ट के अधिवक्ता मधुकर मिश्र और शशांकधर शेखर कहते हैं, 'फॉर्म-6 की गाइडलाइन में आइटम नं 5 के मुताबिक आधार कार्ड देना जरूरी नहीं है। आधार कार्ड नागरिकता का जरूरी दस्तावेज नहीं है। हालांकि वोटर लिस्ट में नाम दर्ज करवाने के लिए फॉर्म-6 भरने में यह एक सहायक दस्तावेज हो सकता है।'

मतदाता जागरूकता । विपक्ष का विरोध जारी है। 9 जुलाई के बिहार बंद की सफलता और जन समर्थन से भी उसका उत्साह बढ़ा हुआ है। इस हंगामे के बावजूद एक फैक्ट यह भी है कि इसी बहाने मतदाता जागरूकता बढ़ी है। लोग वोटर बनने के लिए परेशान हैं। फॉर्म जमा करने में भी ज्यादातर लोग पेच नहीं फंसा रहे। मुजफ्फरपुर के पारू निवासी नरेश वर्मा ने परिवार के 8 सदस्यों के फॉर्म जमा करा दिए हैं। बात करते हुए उनकी खुशी समझ आती है कि उनका परिवार वोटर बना रहेगा।

सुप्रीम मुहर । सुप्रीम कोर्ट ने जब साफ कर दिया है कि बिहार में वोटर लिस्ट रिविजन जारी रहेगा, तो एक तरह से अभियान पर पक्की मुहर लग गई है। विपक्ष को इससे थोड़ा धक्का जरूर लगा है, लेकिन शीर्ष अदालत ने साथ में आधार, राशन और वोटर कार्ड को भी मान्यता देने का सुझाव दिया। विपक्ष इसे सफलता मान रहा और यह संदेश भी समाज के निचले तबके में पहुंचा रहा है कि सत्तारूढ़ गठबंधन की पार्टियां चुनाव आयोग को अपने फायदे के लिए इस्तेमाल कर रही हैं।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

काश! मेरे पास चाइनीज डिफेंस सिस्टम होता

अखिलेश प्रताप सिंह

आखिरकार सावन के साथ मॉनसून का दिल भी पसीज ही गया। कहां तो भाई साब, हम दिल्लीवाले मनपसंद बीयर को तरस गए थे। दिल्ली के बाहर से लानी पड़ रही थी। और कहां अब ये झमाझम बारिश। माहौल बन गया, मजा आ गया। अभी मैं पार्क में घुसा ही था कि सामने दिखे सज्जन ने तपाक से कहा।

क्या मजा आ रहा है? पहले बिना पानी के ही द्वारका लबालब हो रहा था, अब जरा सी बारिश में गुड़गांव ऊभचूभ हो रहा है। करोड़ों करोड़ के घर पानी में इस तरह घिर गए, जैसे झील में किसी नौसिखिया आर्किटेक्ट ने डिजाइन कर दिया हो। पानी में तैरती महंगी कारें नहीं देखीं क्या आपने?

पर वह मुस्कुराते रहे। कहने लगे, पानी उतरने में कोई मजा नहीं है भाई साब। पानी न उतरे, इसीलिए तो गुड़गांव से बेंगलुरु तक पैसा बहाया जाता है पानी की तरह। मास्टर प्लान बनता है, प्लॉट कटते हैं, सड़कें और फ्लाईओवर बनते हैं। सारी कसरत पानी बचाने के लिए ही तो होती है। पानी गए न ऊबरे, मोती मानुस चून। आनंद लीजिए।

ये सज्जन मेरी सैर का मजा खराब करने पर तुल गए थे। मैंने दूसरा पॉइंट पकड़ा। आपने सुबह-सुबह शराब-वराब की बात क्यों की, वह भी सावन के महीने में?

AI Image

गुस्ताख़ी माफ़

कुछ तो खयाल कीजिए भोले-भंडारी का। इस पवित्र महीने में लहसुन-प्याज, मांस-मदिरा खाने-पीने की बात तो दूर, इनका नाम भी नहीं लेना चाहिए। आपको पता नहीं है? मैंने उन्हें दबोच लिया।

वह हंसने लगे। सबका खयाल रखने वाले, सब पर आशीर्वाद बरसाने वाले भोले-भंडारी का नाम लेते हैं और यह न करो, उसे न छुओ, वह न खाओ, यह न पीयो का हल्ला भी मचाते हैं। वह तो जरा से प्रेम से भी प्रसन्न होने वाले देवों के देव ठहरे। पशु-पक्षी, नर-नारी से लेकर देव-दानव तक जब उन्होंने कोई भेद न माना, तो आप क्यों लहसुन-प्याज में अटके हुए हैं? ऐसा लगता है, आपका ज्यादा ध्यान इसी पर है, भोले-भंडारी में मन नहीं रमा रहे आप।

इतना कहकर वह ऐसे ठठाकर हंसे, जैसे उन्होंने ब्रह्मास्त्र चला दिया हो। पर मेरे पास भी कोई चाइनीज डिफेंस सिस्टम नहीं था। मैंने उन्हें झिड़का। क्या नास्तिक जैसी बातें कर रहे हैं। धर्म-कर्म भी कुछ होता है या नहीं। पूजा-पाठ के नियम नहीं मानेंगे, अलग-अलग राग अलापेंगे तो एकता कैसे बनेगी?

बात एकता की है या एकरूपता की? उनने पलट सवाल दाग दिया। और भोले-भंडारी तो ऐसे दयालु ठहरे कि अपवित्र को पवित्र करने में जरा भी देर न लगाएं। भाई साब, आप जो ये चीजें बता रहे हैं, उनसे अगर कोई भक्त अपवित्र हो भी गया तो देवाधिदेव नीलकंठ को मन से याद करे, उनकी कृपा से क्या वह फिर से पावन नहीं हो जाएगा? सब लोग एक तरह से चलें, एक तरह से खाएं-पीएं, एक स्वर में बोलें, एक ही बात मानें और यहां तक कि एक ही तरीके से पूजा-पाठ भी करें। चाहते क्या हैं आप? और किसी से नहीं, तो कम से कम भोले-भंडारी से तो सीखिए।

मैं जब तक जवाब देने के बारे में सोचता, वह अपनी बातों की झमाझम बारिश समेटकर तेजी से निकल गए। अगली बार मिले तो उन्हें कड़ा जवाब दूंगा। यह हमारा सावन है, हमारी पूजा है, ये कौन हुए सीख देने वाले?

OBC को कैसे साथ लाएगी कांग्रेस

लगातार तीन आम चुनावों में BJP के हाथों मिली हार के बाद कांग्रेस को यह अहसास तो हो चला है कि सत्ताधारी पार्टी के अजेय रथ के पीछे एक बड़ी ताकत OBC समुदाय की है, जिसका प्रतिनिधित्व खुद पीएम नरेंद्र मोदी करते हैं। अनुमान है कि आबादी में इस समुदाय की हिस्सेदारी करीब 60% है, जिसमें लगभग 96 जातियां आती हैं। ऐसे में राहुल गांधी और कांग्रेस ने BJP से दो-दो हाथ करने के लिए उन्हीं के पिच पर उतरने की योजना बनाई है। इसीलिए कांग्रेस ने अपने परंपरागत वोटर रहे OBC को फिर अपनी ओर लाने की कोशिश शुरू की है। राहुल गांधी 'जिसकी जितनी भागीदारी, उतनी उसकी हिस्सेदारी' के नारे के साथ कांग्रेस को इस दिशा में आगे बढ़ाने की बात लगातार करते रहे हैं। वह जातिगत जनगणना की मांग भी करते रहे। पिछले दिनों BJP सरकार ने जातिगत जनगणना पर जो फैसला किया, उसके पीछे कांग्रेस की ओर से आ रहे दबाव का हाथ माना जा रहा है।

OBC को साधने की रणनीति

भारतीय राजनीति में OBC आज सबसे बड़ा और निर्णायक वर्ग बन चुका है। चुनाव लोकसभा के हों या विधानसभा के, हर पार्टी की नजर इस वर्ग पर रहती है। इसी को ध्यान में रखते हुए कांग्रेस ने इस वर्ग को एक बार फिर से जोड़ने के लिए कई योजनाओं पर काम शुरू किया। OBC वोटों को साधने के लिए कांग्रेस के केंद्रीय नेतृत्व ने राजस्थान के पूर्व सीएम अशोक गहलोत से लेकर डेप्युटी सीएम सचिन पायलट, छत्तीसगढ़ के पूर्व सीएम भूपेश बघेल, कर्नाटक के मौजूदा सीएम सिद्धारमैया जैसे तमाम सीनियर नेताओं को लेकर एक OBC काउंसिल गठित की है। इसमें OBC वर्ग के 24 सीनियर नेता हैं। इसकी पहली बैठक 15 जुलाई को बेंगलुरु में हो रही है। हाईकमान की ओर से काउंसिल को OBC समुदाय से जुड़े डेटा को इकट्ठा करने और उनके महत्वपूर्ण मुद्दों को असरदार तरीके से जमीन पर उठाने की जिम्मेदारी दी गई है।

विशुद्ध राजनीति

कसौटी

इतना ही नहीं, कांग्रेस ने OBC तबके पर पकड़ मजबूत बनाने के लिए जगह-जगह आयोजन व सम्मेलन की योजना भी बनाई है। इस सिलसिले में OBC को लेकर एक महासम्मेलन आगामी 25 जुलाई को दिल्ली में होगा, जिसे OBC भागीदारी न्याय महासम्मेलन का नाम दिया जा रहा है। महासम्मेलन में कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे और लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी के भी शामिल होने की बात कही जा रही है। कांग्रेस ने अपने संगठन सृजन की कवायद में लगभग आधे पद OBC चेहरों को देने की योजना भी बनाई है। इसका एक बड़ा उदाहरण राजस्थान में दिखता है। पार्टी ने वहां आगामी स्थानीय निकाय और पंचायत चुनावों को देखते हुए प्रदेश स्तर से लेकर बूथ स्तर तक संगठन में OBC चेहरों को खासी तवज्जो दी है। इस पहल के जरिए कांग्रेस सिर्फ नेतृत्व स्तर पर प्रतिनिधित्व नहीं बढ़ा रही, बल्कि इस तबके की आकांक्षाओं को पार्टी के नीतिगत केंद्र में भी ला रही है। प्रदेशों में भी OBC मुद्दे आगे बढ़ाए जा रहे हैं। मध्य प्रदेश में OBC वर्ग को 27% आरक्षण का लाभ न दिए जाने के मुद्दे को उठाते हुए कांग्रेस ने पिछले दिनों चेतावनी दी कि इसके लिए वह राज्यव्यापी आंदोलन करेगी।

नैरेटिव बनाने का औजार

जातिगत जनगणना को लेकर कांग्रेस लगातार मुखर रही है। बिहार में कांग्रेस ने महागठबंधन सरकार का हिस्सा रहते हुए न सिर्फ इस पहल का समर्थन किया, बल्कि कर्नाटक, राजस्थान जैसे राज्यों में अपनी सरकारों के जरिए इस दिशा में ठोस शुरुआत की। राहुल गांधी इसे केवल चुनावी मुद्दा नहीं, बल्कि सत्ता और संसाधनों के समान बंटवारे का आधार मानते हैं। कांग्रेस का यह रुख BJP की मौजूदा ढुलमुल नीति के विपरीत है, जिससे उसे OBC वर्ग के बीच वैचारिक स्पष्टता का लाभ मिल सकता है। कांग्रेस समझ रही है कि जनगणना से जुड़े आंकड़े भविष्य में नीतियों और आरक्षण के नए प्रारूप गढ़ने में निर्णायक भूमिका निभा सकते हैं। कांग्रेस अब इस वर्ग को वोट बैंक नहीं, बल्कि पॉलिसी स्टेकहोल्डर के रूप में देख रही है।

जातिगत जनगणना को राष्ट्रीय मुद्दा बनाकर कांग्रेस BJP को सामाजिक न्याय के सवाल पर घेरने की तैयारी में है। हालांकि कांग्रेस के लिए यह सब बहुत आसान नहीं होगा। जिस तरह से BJP ने पिछले एक दशक में OBC वर्ग के बीच अपनी पकड़ मजबूत की है और पीएम मोदी के रूप में एक मजबूत ब्रैंड उसके साथ है, उसे देखते हुए कांग्रेस की राह चुनौती भरी दिखती है। फिर भी, कांग्रेस की बदली हुई रणनीति से संकेत मिलता है कि पार्टी अब समझ चुकी है OBC के समर्थन के बिना चुनावी वैतरणी पारकर सत्ता के शिखर तक पहुंचना असंभव है। ऐसे में कांग्रेस अगर इस वर्ग को सही प्रतिनिधित्व और ठोस परिणाम देती है, तो आने वाले वक्त में OBC वर्ग दोबारा कांग्रेस की तरफ लौट सकता है।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ टकराव की ओर

14 जुलाई का संपादकीय 'ट्रंप का बदला' पढ़ा। अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप के दूसरे कार्यकाल में उनकी नीतियां लगातार विवादों में बनी हुई हैं। व्यापारिक टैरिफ, वैश्विक सहयोग से हटने की प्रवृत्ति और सरकारी संस्थानों में छंटनी जैसी कार्रवाइयों से प्रशासन पर 'बदले की राजनीति' का आरोप लग रहा है। 1300 से अधिक सरकारी कर्मचारियों को एक ही दिन में बर्खास्त करना इसी का उदाहरण है। ट्रंप ने शिक्षा और स्वास्थ्य से जुड़ी प्रतिष्ठित संस्थाओं जैसे हार्वर्ड पर भी सख्त रुख अपनाया है, जिसे आलोचक लोकतांत्रिक मूल्यों के खिलाफ मानते हैं। उनकी निर्णय-शैली न केवल अमेरिका के भीतर बल्कि वैश्विक मंच पर भी अस्थिरता का कारण बन रही है। ट्रंप का नेतृत्व घरेलू और अंतरराष्ट्रीय, दोनों मोर्चों पर अमेरिका को टकराव की ओर ले जा रहा है।

मीना धानिया, सिरसपुर

■ योजनाओं का ढांचा

यह पत्र 14 जुलाई के लेख 'मेडिकल कॉलेजों का PPP मॉडल ठीक है?' से संबंधित है। पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप के तहत सरकारी अस्पतालों को निजी हाथों में सौंपने का विचार कुछ हद तक आकर्षक लग सकता है, लेकिन इसके अनुभव मिले-जुले हैं। कई जगहों पर मरीजों को न मुफ्त इलाज मिल पाया, न ही सस्ती सेवाएं। निजी संस्थाएं अधिक मुनाफा कमाने के लिए फीस और खर्च बढ़ा देती हैं, जिससे गरीबों के लिए स्वास्थ्य सेवाएं और शिक्षा दोनों दूर की बात हो जाती हैं। समझना होगा कि शिक्षा और चिकित्सा जैसे क्षेत्रों में निजी पूंजी को बड़ा रोल देना आत्मघाती है।

सुजीत केशरी, नोएडा

nbtedit@timesofindia.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

बिहार में बांग्लादेश, नेपाल के नागरिक बड़ी तादाद में – खबर
– क्या चुनाव के समय ही खुलती हैं वोटरों की कुंडलियां!

मोहित राणा

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

www.speakingtree.nbt.in

अकेलापन काटने दौड़ता है, जब हम ख़ुद से कटे होते हैं

देवेन्द्रराज सुथार

इंसान भी कितना अजीब है, भीड़ में रहकर घुटता है और अकेले में डरता है। लेकिन क्या वाकई अकेलापन कोई समस्या है या हमने इसे समस्या बना लिया है?

आज के डिजिटल दौर में हमारे पास हजारों 'कनेक्शन' हैं। सोशल मीडिया पर फ्रेंड्स की लंबी लिस्ट, सैकड़ों लाइक्स और कमेंट्स... लेकिन भीतर से अक्सर लोग यही कहते हैं, 'मैं अकेला हूं।' यह कैसा विरोधाभास है? शायद इसलिए, क्योंकि ये सारे जुड़ाव बाहरी हैं। हम हर दिन दूसरों से बातें तो करते हैं, लेकिन खुद से संवाद करना भूल चुके हैं। खुद मिलना नहीं जानते। असली मिलना तब होता है, जब अकेले बैठकर अपने भीतर की आवाज सुनी जाए। बुद्ध ने यही किया था। अकेले बैठे थे बोधि वृक्ष के नीचे। महावीर ने क्या किया था? 12 साल मौन रहे, अकेले। यीशु गए थे रेगिस्तान में 40 दिन, अकेले। ये समझ गए थे कि असली खजाना अकेलेपन में छिपा है।

अकेलापन असहज तब लगता है, जब हम खुद से कटे होते हैं - जब हम केवल दूसरों से मान्यता, सराहना और भावनात्मक सहारा पाने की उम्मीद करते हैं। जैसे ही यह सहारा डगमगाता है, हम टूट जाते हैं। इसीलिए अकेले रहना हमें डराने लगता है। अगर थोड़ा रुकें और खुद से मिलने की हिम्मत करें, तो यही अकेलापन आत्म-समझ और मानसिक स्पष्टता का प्रवेशद्वार बन सकता है।

एकांत और अकेलेपन में बुनियादी फर्क है। अकेलापन वह स्थिति है, जब हम दूसरों की गैरमौजूदगी में अधूरा महसूस करते हैं। वहीं, एकांत वह अनुभव है, जब हम दूसरों के बिना भी खुद में संतुलन और पूर्णता महसूस करते हैं। एकांत में कोई कमी नहीं, बल्कि एक प्रकार की आत्म-पूर्ति होती है।

समस्या तब होती है, जब हम अपनी खुशी, शांति और प्रेम का स्रोत बाहर ढूंढ़ते हैं - किसी रिश्ते, किसी भूमिका, किसी उपलब्धि में। लेकिन बाहर की ये चीजें स्थायी नहीं। जब वे छिनती हैं, तो खालीपन भीतर पसरने लगता है। इस खालीपन से डरकर हम और जुड़ाव खोजने लगते हैं, फिर चाहे वह स्थायी हो और या अस्थायी। हम यह भूल जाते हैं कि असली शक्ति तब आती है, जब हम अपने साथ सहज होते हैं, खुद को समझने लगते हैं। कुछ नहीं करते, बस होते हैं, उसी रूप में जैसे हैं।

प्रकृति की ओर देखिए - एक वृक्ष अकेला खड़ा होता है, फिर भी अपनी गरिमा और जीवंतता नहीं छोड़ता। पहाड़ अकेले हैं, लेकिन अपने मौन में पूर्ण। हमें उनसे सीखना होगा कि पूर्णता बाहर से नहीं। शायद यही वह मोड़ है, जहां अकेलापन बोझ नहीं, बल्कि अवसर बन सकता है - अपने भीतर उतरने का, खुद को स्वीकार करने का। अकेलापन तब तक डरावना है, जब तक हम इससे बचते हैं। लेकिन जैसे ही हम इसे अपनाते हैं, यह एकांत में बदल जाता है। और, एकांत कोई अभिशाप नहीं, वरदान है!